

केंद्र-राज्य संबंध (Centre-State Relations)

भारत का संविधान अपने स्वरूप में संघीय है तथा समस्त शक्तियां (विधायी, कार्यपालक और वित्तीय) केंद्र एवं राज्यों के मध्य विभाजित हैं। यद्यपि न्यायिक शक्तियों का बंटवारा नहीं है। संविधान में एकल न्यायिक व्यवस्था की स्थापना की गई है, जो केंद्रीय कानूनों की तरह ही राज्य कानूनों को लागू करती है।

यद्यपि केंद्र एवं राज्य अपने-अपने क्षेत्रों में प्रमुख हैं, तथापि संघीय तंत्र के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए इनके मध्य अधिकतम सहभागिता एवं सहकारिता आवश्यक है। इस तरह संविधान ने केंद्र-राज्य संबंधों को लेकर विभिन्न मुद्दों पर व्यवस्थाएं स्थापित की हैं।

केंद्र एवं राज्यों के संबंधों का अध्ययन तीन दृष्टिकोणों से किया जा सकता है:

- विधायी संबंध,
- प्रशासनिक संबंध, एवं;
- वित्तीय संबंध।

विधायी संबंध

संविधान के भाग XI में अनुच्छेद 245 से 255 तक केंद्र-राज्य विधायी संबंधों की चर्चा की गई है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य अनुच्छेद भी इस विषय से संबंधित हैं।

किसी अन्य संघीय संविधान की तरह भारतीय संविधान भी केंद्र एवं राज्यों के बीच उनके क्षेत्र के हिसाब से विधायी शक्तियों का बंटवारा करता है। इसके अतिरिक्त संविधान पांच असाधारण परिस्थितियों के अंतर्गत राज्य क्षेत्र में संसदीय विधान सहित कुछ मामलों में राज्य विधानमण्डल पर केन्द्र के नियंत्रण की व्यवस्था करता है। इस तरह केंद्र-राज्य विधायी संबंधों के मामले में चार स्थितियां हैं:

- केंद्र और राज्य विधान के सीमांत क्षेत्र,
- विधायी विषयों का बंटवारा,
- राज्य क्षेत्र में संसदीय विधान, और;
- राज्य विधान पर केंद्र का नियंत्रण।

1. केंद्र और राज्य विधान का क्षेत्रीय विस्तार

संविधान ने केन्द्र और राज्यों को प्रदत्त शक्तियों के संबंध में स्थानीय सीमाओं को लेकर विधायी संबंधों को निम्नलिखित तरीके से परिभाषित किया है:

- (i) संसद पूरे भारत या इसके किसी भी क्षेत्र के लिए कानून बना सकती है। भारत क्षेत्र में राज्य शामिल हैं। केंद्रशासित राज्य और किसी अन्य क्षेत्र को भारत के क्षेत्र में माना जाता है।

- (ii) राज्य विधानमंडल पूरे राज्य या राज्य के किसी क्षेत्र के लिए कानून बना सकता है। राज्य विधानमंडल द्वारा निर्मित कानून को राज्य के बाहर के क्षेत्रों में लागू नहीं किया जा सकता, सिवाए तब जब राज्य और वस्तु में संबंध पर्याप्त हों।
- (iii) केवल संसद अकेले 'अतिरिक्त क्षेत्रीय विधान' बना सकती है। इस तरह संसद का कानून भारतीय नागरिक एवं उनकी विश्व में कहीं भी संपत्ति पर लागू होता है।

यद्यपि संविधान ने क्षेत्रीय न्यायक्षेत्र के मामले पर संसद पर कुछ प्रतिबंध भी लगाए हैं। दूसरे शब्दों में, संसद के कानून निम्नलिखित क्षेत्रों में लागू नहीं होंगे:

- (i) राष्ट्रपति चार केंद्रशासित क्षेत्रों में शांति, उन्नति एवं अच्छी सरकार के लिए नियम बना सकते हैं। ये हैं—अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह, लक्षद्वीप, दादरा एवं नागर हवेली और दमन व दीव। इस प्रकार बनाया गया विनियम, संसद के किसी अधिनियम के समान ही प्रयोज्य और प्रभावी होगा। इन संघशासित प्रदेशों के संबंध में इसे संसद के किसी अधिनियम को निरसित या संशोधित करने का भी अधिकार है।
- (ii) राज्यपाल को इस बात की शक्ति प्राप्त है कि वह संसद के किसी विधेयक को सूचीबद्ध क्षेत्र में लागू न करे या उसमें कुछ विशेष संशोधन कर लागू करे।
- (iii) असम का राज्यपाल संसद के किसी विधेयक को जनजातीय क्षेत्र (स्वायत्त जिलों) में प्रयोज्य न कर या कुछ विशिष्ट परिवर्तनों के साथ लागू कर सकता है। राष्ट्रपति को भी इस तरह की शक्ति जनजातीय क्षेत्रों (स्वायत्त जिलों), मेघालय, त्रिपुरा एवं मिजोरम के लिए प्राप्त हैं।

2. विधायी विषयों का बंटवारा

संविधान ने सातवीं अनुसूची में केंद्र एवं राज्य के बीच विधायी विषयों के संबंध में त्रिस्तरीय व्यवस्था की है—सूची I (संघ सूची), सूची II (राज्य सूची) और सूची III (समवर्ती सूची)।

- (i) संघ सूची से संबंधित किसी भी मामले पर कानून बनाने की संसद को विशिष्ट शक्ति प्राप्त है। इस सूची में इस समय 100 विषय हैं (मूलतः 97)¹, जैसे—रक्षा,

बैंकिंग, विदेश मामले, मुद्रा, आणविक ऊर्जा, बीमा, संचार, केंद्र-राज्य व्यापार एवं वाणिज्य, जनगणना, लेखा परीक्षा आदि।

- (ii) राज्य विधानमंडल को 'सामान्य परिस्थितियों' में राज्यसूची में शामिल विषयों पर कानून बनाने की शक्ति प्राप्त है। इस समय इसमें 61 विषय (मूलतः 66 विषय)² हैं, जैसे—सार्वजनिक व्यवस्था, पुलिस, जन-स्वास्थ्य एवं सफाई, कृषि, जेल, स्थानीय शासन, मत्स्यपालन, बाजार आदि।
- (iii) समवर्ती सूची के संबंध में संसद एवं राज्य विधानमंडल दोनों कानून बना सकते हैं। इस सूची में इस समय 52 विषय (मूलतः 47)³ हैं, जैसे—आपराधिक कानून प्रक्रिया, सिविल प्रक्रिया, विवाह एवं तलाक, जनसंख्या नियंत्रण और परिवार नियोजन, बिजली, श्रम कल्याण, आर्थिक एवं सामाजिक योजना, दवा, अखबार, पुस्तक एवं छपा प्रेस एवं अन्य। 42वें संशोधन अधिनियम 1976 के तहत 5 विषयों को राज्य सूची से समवर्ती सूची में शामिल किया गया। वे हैं—(क) शिक्षा, (ख) वन, (ग) नाप एवं तौल (घ) वन्य जीवों एवं पक्षियों का संरक्षण, (ङ) न्याय का प्रशासन। उच्चतम एवं उच्च न्यायालय के अतिरिक्त सभी न्यायालयों का गठन।

अवशिष्ट सूची से संबद्ध विषयों (वे विषय जो तीनों सूचियों में सम्मिलित नहीं होते) पर विधान बनाने का अधिकार संसद को है। इस अवशिष्ट शक्ति में अवशिष्ट करों के आरोपण के संबंध में विधान बनाने की शक्ति भी शामिल है।

इस तरह स्पष्ट है कि विधायी एकता के लिए आवश्यक राष्ट्रीय महत्व के ऐसे मामलों को संघ सूची में शामिल किया गया। क्षेत्रीय एवं स्थायी महत्व एवं विविधता वाले विषयों को राज्य सूची में रखा गया, जिन विषयों पर संपूर्ण देश में विधायिका की एकरूपता वांछनीय है, परन्तु अनिवार्य नहीं, उन्हें समवर्ती सूची में रखा गया। इस तरह संविधान अनेकता में एकता की अनुमति देता है।

अमेरिका में संघीय सरकार की शक्तियां संविधान में निहित हैं तथा अवशिष्ट शक्तियां राज्यों को प्रदान कर दी गयी हैं। आस्ट्रेलियाई संविधान में भी अमेरिका की तरह शक्तियों के एकल वर्णन की प्रकृति को अपनाया गया है। कनाडा में शक्तियों के आबंटन की दोहरी प्रकृति है अर्थात् संघीय और प्रांतीय तथा अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र में निहित हैं।

भारत सरकार अधिनियम (GoI), 1935 त्रिस्तरीय महत्व के मामलों की व्यवस्था करता है अर्थात् संघीय, प्रांतीय एवं समवर्ती। वर्तमान संविधान इस अधिनियम के मामलों को एक अंतर के साथ अपनाता है। खास शक्तियां उस समय न तो संघीय विधायिका को दी गईं, न प्रांतीय विधायिका को; बल्कि भारत के गवर्नर जनरल को दी गईं। इस मामले में भारत ने कनाडा पद्धति को अपनाया।

संविधान में संघ सूची को राज्य एवं समवर्ती सूची के ऊपर रखा गया है और समवर्ती सूची को राज्य सूची के ऊपर के ऊपर रखा गया है। संघ सूची एवं राज्य सूची के बीच टकराव होने की स्थिति में संघ सूची मान्य होगी। यही व्यवस्था संघ सूची व समवर्ती सूची के मामले में भी यही स्थिति होगी। समवर्ती एवं राज्य सूची में संघर्ष की स्थिति पर पूर्व वाली मान्य होगी।

यदि समवर्ती सूची के किसी विषय को लेकर केंद्रीय कानून एवं राज्य कानून में संघर्ष की स्थिति आ जाए तो केंद्रीय कानून राज्य कानून पर प्रभावी होगा। लेकिन इसमें एक अपवाद भी है। यदि राज्य द्वारा बनाया गया कानून राष्ट्रपति की सिफारिश के लिए सुरक्षित है और उसे राष्ट्रपति की सहमति मिल जाती है तो राज्य का कानून प्रभावी होगा, लेकिन संसद भी इस पर कानून बना सकती है।

3. राज्य क्षेत्र में संसदीय विधान

केंद्र एवं राज्यों के बीच बंटवारे की उक्त व्यवस्था सामान्य काल में विधायी शक्तियों के बंटवारे के लिए होती हैं। लेकिन असामान्य काल में बंटवारे की योजना या तो सुधारी जाती है या स्थगित कर दी जाती है। दूसरे शब्दों में, संविधान संसद को यह शक्ति प्रदान करता है कि राज्य सूची के तहत निम्नलिखित पांच असाधारण परिस्थितियों में कानून बनाए:

जब राज्यसभा एक प्रस्ताव पारित कर दे

यदि राज्यसभा यह घोषणा कर दे कि राष्ट्र हित में यह आवश्यक है कि संसद को राज्य सूची के मामले में कानून बनाना चाहिए, तब संसद इस मसले पर कानून बनाने के लिए सक्षम हो जाएगी। इस तरह के किसी प्रस्ताव को उपस्थित सदस्यों में दो-तिहाई का समर्थन मिलना चाहिए। यह प्रस्ताव एक वर्ष तक प्रभावी रहेगा। इसे आगे असंख्य बार बढ़ाया जा सकता है परन्तु इसे एक बार में एक वर्ष से अधिक के लिए नहीं बढ़ाया जा सकता।

यह व्यवस्था राज्य विधानमंडल को समान मुद्दे पर कानून बनाने से नहीं रोकती है, लेकिन राज्य कानून एवं संसदीय कानून के बीच असहमति के मामले पर बाद की व्यवस्था मान्य होगी।

राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान

यदि आपातकाल प्रभावी हो जाए तो संसद राज्य सूची के मामलों की शक्तियां अधिगृहीत कर लेती है। आपातकाल समाप्त होने के छह माह बाद तक यह व्यवस्था प्रभावी रहेगी।

यहां भी राज्य विधानमंडल की समान मुद्दे पर कानून बनाने की शक्ति प्रतिबंधित नहीं होती, लेकिन इसमें भी टकराव की स्थिति में संसदीय कानून हावी रहता है।

राज्यों के अनुरोध की अवस्था में

जब दो या अधिक राज्यों के विधानमंडल प्रस्ताव पारित करें कि राज्य सूची के मसले पर कानून बनाया जाए तब संसद उस मामले के संबंध में कानून बना सकती है। यह कानून उन्हीं राज्यों में प्रभावी होगा, जिन्होंने इसे बनाने के संबंध में प्रस्ताव पारित किया था। यद्यपि बाद में कोई राज्य इस संबंध में विधानमंडल में पारित प्रस्ताव के माध्यम से इसे लागू कर सकता है। इस तरह के कानून का संशोधन या इस पर पुनर्विचार संसद ही कर सकती है, न कि संबंधित राज्य।

उक्त प्रावधान के तहत संसद उन मामलों पर भी कानून बना सकती है, जिन पर उसे सीधे शक्ति प्रदत्त नहीं की गई। दूसरी ओर, ऐसे मामले में राज्य विधानमंडल की कानून बनाने की शक्ति समाप्त हो जाती है।

राज्यों द्वारा इस प्रकार का प्रस्ताव पारित करने का अभिप्राय यह है कि उन्होंने अपने विधान निर्माण की शक्ति को स्थगित या समर्पित कर दिया है तथा सभी कुछ संसद के हाथों में सौंप दिया है।

उक्त व्यवस्था के तहत पारित कुछ कानूनों के उदाहरण इस प्रकार हैं—पुरस्कार प्रतियोगिता अधिनियम 1955, वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम 1972, जल (प्रदूषण नियंत्रण एवं निवारण) अधिनियम 1974, नगर भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 और मानव अंग प्रतिरोपण अधिनियम, 1994।

अंतर्राष्ट्रीय समझौतों को लागू करना

संसद राज्य सूची के किसी मामले में अंतर्राष्ट्रीय संधि या समझौते के लिए कानून बना सकती है। यह व्यवस्था केंद्र को अपने अंतर्राष्ट्रीय दायित्व और प्रतिबद्धता को पूरा करने के योग्य बनाती है।

उक्त व्यवस्था के तहत बनाए गए कुछ कानूनों के उदाहरण हैं, संयुक्त राष्ट्र (सुविधा एवं प्रतिरक्षा) अधिनियम 1947, जेनेवा समझौता अधिनियम 1960, अपहरण के खिलाफ अधिनियम 1982 एवं पर्यावरण से संबंधित विधान और ट्रिप्स (TRIPS)।

राष्ट्रपति शासन के दौरान

जब राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू हो तो संसद को संबंधित राज्य के लिए राज्य सूची पर कानून बनाने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। राष्ट्रपति शासन के उपरांत भी संसद द्वारा बनाया गया कानून प्रभावी रहता है। इसका अर्थ यह है कि इस कानून के प्रभावी होने की अवधि राष्ट्रपति शासन की अवधि से स्वतंत्र है, परन्तु ऐसे कानून को राज्य विधानमण्डल द्वारा निरसित या परिवर्तित या पुनः लागू किया जा सकता है।

4. राज्य विधानमंडल पर केंद्र का नियंत्रण

अपवादजनक परिस्थितियों में राज्य सूची पर संसद के सीधे विधान के अतिरिक्त संविधान केंद्र को राज्य सूची पर नियंत्रण के लिए निम्नलिखित मामलों में शक्तिशाली बनाता है:

- (i) राज्यपाल कुछ प्रकार के विधेयकों को, राष्ट्रपति की संस्तुति के लिए सुरक्षित रख सकता है। राष्ट्रपति को उन पर विशेष वीटो की शक्ति प्राप्त है।
- (ii) राज्य सूची से संबंधित कुछ मामलों पर विधेयक सिर्फ राष्ट्रपति की पूर्व सहमति पर ही लाया जा सकता है। (उदाहरण के लिए व्यापार और वाणिज्य की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाने संबंधी विधेयक)
- (iii) राष्ट्रपति राज्य विधानमंडल द्वारा पारित धन या वित्त विधेयक को वित्तीय आपातकाल के दौरान सुरक्षित रखने का निर्देश दे सकता है।

उक्त प्रावधानों से स्पष्ट होता है कि संविधान ने विधायी विषयों पर कानून बनाने के मामले में केंद्र की स्थिति ज्यादा शक्तिशाली रखी है। इस संबंध में सरकारिया आयोग (1983-87) ने यह पाया कि 'संघीय सर्वोच्चता केंद्र एवं राज्यों के कानूनों के मध्य तनाव एवं टकरावों को समाप्त करने एवं सौहार्दपूर्ण संबंध विकसित करने की एक शक्ति है। यदि केंद्र की सर्वोच्चता की इस स्थिति को समाप्त किया गया तो इसके नकारात्मक प्रभावों का अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता। हमारी द्वैध राजनीतिक

व्यवस्था में हस्तक्षेप, विधित अड़चनें, भ्रांतियों इत्यादि जैसे अनेकानेक कारक हैं, जो अन्ततोगत्वा नागरिकों के हितों को प्रभावित कर सकते हैं। एकीकृत विधायी नीति एवं एकरूपता सामान्य केंद्र-राज्य संबंधों के आधारभूत मुद्दे हैं। इससे ही हमारी अनेकता में एकता की पहचान अक्षुण्ण नहीं रह सकती है। इस प्रकार संघीय सर्वोच्चता की यह नीति संघीय व्यवस्था के प्रभावी एवं निर्बाध संचालन हेतु अति आवश्यक है।⁴

प्रशासनिक संबंध

संविधान के भाग XI में अनुच्छेद 256 से 263 तक केंद्र व राज्य के बीच प्रशासनिक संबंधों की व्याख्या की गयी है। इसी मुद्दे पर कई अन्य अनुच्छेद भी हैं।

कार्यकारी शक्तियों का बंटवारा

केंद्र व राज्यों के बीच कुछ मामलों को छोड़कर विधायी व कार्यकारी शक्तियों का बंटवारा किया गया है। इस प्रकार, केंद्र की कार्यपालक शक्तियां पूरे भारत में विस्तृत हैं: (i) उस मामले में जिसमें संसद को विशेष विधायी शक्तियां प्राप्त हैं (अर्थात् संघ सूची के विषय), (ii) किसी संधि या समझौते के तहत अधिकार, प्राधिकरण और न्याय क्षेत्र का कार्य। इसी तरह राज्य की कार्यपालक शक्तियां, राज्य की सीमाओं तक विस्तृत हैं (अर्थात् राज्य सूची के विषय)।

वे विषय, जिन पर केन्द्र एवं राज्य दोनों को विधान निर्माण की शक्ति प्राप्त है (अर्थात् समवर्ती सूची के विषय), उनमें कार्यकारी शक्तियां राज्यों में निहित होती हैं। सिवाए तब जब कोई सांविधानिक उपबंध या संसदीय विधि इसे विशिष्टतः केन्द्र को प्रदत्त करे। इस प्रकार समवर्ती विषय संबंधी कोई नियम यद्यपि संसद द्वारा निर्मित किया गया हो, परन्तु उसे राज्य द्वारा कार्यनिष्पादित किया जाता है, सिवाए तब जब संविधान या संसद अन्यथा निदेशित करे।⁵

राज्य एवं केंद्र के दायित्व

संविधान ने राज्यों की कार्यकारी शक्तियों के संबंध में उन पर दो प्रतिबंध आरोपित किये हैं, जिससे इस संबंध में केन्द्र को कार्यकारी शक्तियों के संबंध में असीमित अधिकार प्राप्त होते हैं। इस प्रकार प्रत्येक राज्य की कार्यकारी शक्ति को इस प्रकार उपयोग किया जा सकता है (अ) संसद द्वारा निर्मित किसी विधान

का अनुपालन सुनिश्चित करना तथा राज्यों से संबंधित कोई वर्तमान विधान (ब) राज्य में केन्द्र की कार्यपालिका शक्ति को बाधित या इसके संबंध में पूर्वाग्रह न रखना। इनमें से पहला, जहां राज्यों पर साधारण दायित्व है, वहीं दूसरा राज्यों पर विशेष कि केन्द्र की कार्यपालिका शक्ति को बाधित न करें।

दोनों ही मामलों में केन्द्र की कार्यकारी शक्तियाँ, इस सीमा तक विस्तृत हैं कि वे अप्रत्यक्ष रूप से राज्यों को यह निर्देश देती हैं कि केन्द्र का कानून उनके कानून से ज्यादा मान्य होगा। केन्द्र के निर्देश प्रकृति में बाध्यकारी से हैं। इस प्रकार अनुच्छेद, 365 कहता है कि यदि कोई राज्य केन्द्र द्वारा दिये गये निर्देश का पालन करने में (या प्रभावी बनाने में) असफल रहता है तो ऐसी दशा में राष्ट्रपति इस आधार पर इस मामले को अपने हाथ में ले सकते हैं कि अमुक राज्य ने संविधान की मंशा या दिशा-निर्देशों के अनुसार कार्य नहीं किया है। इसका अभिप्राय है कि ऐसी दशा में अनुच्छेद 365 के अंतर्गत राज्य पर राष्ट्रपति शासन लगाया जा सकता है।

राज्यों को केन्द्र के निर्देश

इन दो मामलों के अतिरिक्त केन्द्र को यह अधिकार है कि वह राज्य को निम्नलिखित मामलों पर अपनी कार्यकारी शक्तियों के प्रयोग के लिए निर्देश दे सकता है:

1. संचार के साधनों को बनाए व उनका रख-रखाव करे।
2. राज्य में रेलवे संपत्ति की रक्षा करे।
3. प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर राज्य से संबंधित भाषायी अल्पसंख्यक समूह के बच्चों के लिए मातृभाषा सीखने की व्यवस्था करे।
4. राज्य में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए विशेष योजनाएं बनाए और उनका क्रियान्वयन करे।

इन मामलों में अनुच्छेद 365 के अंतर्गत केन्द्र के निर्देश भी राज्यों पर लागू होते हैं।

कार्यों का पारस्परिक प्रतिनिधित्व

केन्द्र और राज्यों के मध्य विधायी शक्तियों का विभाजन कठोर है। इस तरह केन्द्र अपनी विधायी शक्ति राज्य को नहीं दे सकता, जबकि कोई इकलौता राज्य, राज्य सूची पर संसद से कानून बनाने को नहीं कह सकता। कार्यपालिका शक्तियों का बंटवारा सामान्यतः विधायी शक्तियों के बंटवारे का ही अनुसरण करता है। परन्तु कार्यपालिका क्षेत्र में ऐसा कठोर बंटवारा टकराव को जन्म दे

सकता है। संविधान ने कठोरता एवं विभेदता को हटाने के लिए एक कार्यकारी अंतर-सरकारी प्रतिनिधिमंडल बनाया।

इसी तरह राष्ट्रपति, राज्य सरकार की सहमति पर केन्द्र के किसी कार्यकारी कार्य को उसे सौंप सकता है। इसी तरह एक राज्य का राज्यपाल, केन्द्र की सहमति पर उसके कार्य को राज्य में कराता है। आपसी समझौते का यह मामला सशर्त या बिना शर्त हो सकता है।¹

संविधान केन्द्र, कार्यकारी कार्यों को राज्य द्वारा निष्पादित करने के संबंध में यह प्रावधान करता है कि केन्द्र, राज्यों की बिना सहमति परिस्थितिवश ऐसा कर सकते हैं। किंतु ऐसी स्थिति में यह कार्य संसद द्वारा किया जायेगा, न कि राष्ट्रपति द्वारा। इस प्रकार संघीय सूची के विषय पर संसद द्वारा बनाया गया कानून केन्द्र के संबंध में शक्तियों का आवंटन एवं करारोपण का अधिकार राज्य को उसकी सहमति के बिना दे सकता है। यद्यपि यही कार्य राज्यों द्वारा नहीं किया जा सकता है।

उक्त व्याख्या से स्पष्ट है कि केन्द्र एवं राज्यों के मध्य पारस्परिक सहयोग या तो आपसी सहमति या विधान के द्वारा स्थापित किया जा सकता है। जहां केन्द्र दोनों रीतियों का प्रयोग कर सकता है, वहीं राज्य केवल प्रथम रीति को ही अपना सकता है।

केन्द्र व राज्यों के बीच सहयोग

संविधान में केन्द्र व राज्य के बीच सहयोग एवं समन्वय के लिए निम्नलिखित उपबंध हैं:

1. संसद किसी अंतरराज्यीय नदी और नदी घाटी के पानी के प्रयोग, वितरण और नियंत्रण के संबंध में किसी विवाद या शिकायत पर न्याय निर्णयन दे सकती है।
2. राष्ट्रपति (अनुच्छेद 263 के तहत) केन्द्र व राज्य के बीच सामूहिक महत्व के विषयों की जांच व बहस के लिए अंतरराज्यीय परिषद का गठन कर सकता है। इस तरह की परिषद 1990⁷ में बनाई गई थी।
3. केन्द्र एवं राज्यों में लोक अधिनियमों, रिकार्डों एवं न्यायिक प्रक्रिया के संचालन के लिये भारत के भू-क्षेत्र को पूर्ण विश्वास एवं साख प्रदान की जानी चाहिए।
4. संसद संवैधानिक उद्देश्य से अंतरराज्यीय व्यापार, वाणिज्य एवं अंतर्संबंध की स्वतंत्रता व्यवस्था के तहत किसी प्राधिकरण का गठन कर सकती है।

अखिल भारतीय सेवाएं

किसी अन्य संघ की तरह केंद्र एवं राज्य की सार्वजनिक सेवाएं बंटी हुई हैं, जिन्हें केंद्रीय सेवाएं या राज्य सेवाएं कहा जाता है। इसमें अखिल भारतीय सेवाएं—आई.ए.एस., आई.पी.एस. और आई.एफ.एस. शामिल हैं। इन सेवाओं के अधिकारी केन्द्र और राज्यों के अंतर्गत उच्च पदों पर अपनी सेवाएं प्रदान करते हैं। परन्तु इनकी नियुक्ति और प्रशिक्षण केन्द्र द्वारा किया जाता है।

इन सेवाओं को केंद्र एवं राज्यों द्वारा संयुक्त रूप से नियंत्रित किया जाता है। इन पर पूर्ण नियंत्रण केंद्र सरकार का एवं तात्कालिक नियंत्रण राज्य सरकार का रहता है।

इन्हें 1947 में भारतीय सिविल सेवा (आईसीएस) के स्थान पर आई.ए.एस. और भारतीय पुलिस (आईपी) के स्थान पर आईपीएस नाम दिया गया, जिसे संविधान में 'अखिल भारतीय सेवाओं' के रूप में मान्यता दी गई। 1966 में भारतीय वन सेवा (IFS) को तीसरी अखिल भारतीय सेवा बनाया गया। संविधान का अनुच्छेद 312 संसद को राज्यसभा के प्रस्ताव के आधार पर नई अखिल भारतीय सेवा के गठन का अधिकार प्रदान करता है।

इन तीनों अखिल भारतीय सेवाओं में से प्रत्येक का आवंटन राज्यों की आवश्यकतानुरूप किया जाता है तथा इनमें से प्रत्येक में समान स्तर के अधिकार होते हैं एवं उन्हें समान वेतन प्रदान किया जाता है।

यद्यपि अखिल भारतीय सेवाएं राज्य की स्वायत्तता और संरक्षण को सीमित कर संविधान के संघीय सिद्धांत का उल्लंघन करती हैं। इन सेवाओं का समर्थन निम्नांकित आधार पर किया जाता है—(i) केंद्र एवं राज्य में उच्च स्तरीय प्रशासन के रख-रखाव में, (ii) पूरे देश में प्रशासनिक एकीकरण व्यवस्था सुनिश्चित करने में एवं (iii) केंद्र एवं राज्यों के सामूहिक हितों के संबंध में सहयोग एवं संयुक्त कार्यों में।

संविधान सभा में अखिल भारतीय सेवाओं को उचित बताते हुये डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि “संघीय व्यवस्था में द्वैध नीति को सभी संघीय व्यवस्थाओं में अपनाया गया है। सभी संघीय व्यवस्थाओं में संघीय सिविल सेवा एवं प्रांतीय सिविल सेवाएँ पायी जाती हैं। भारतीय संघ में भी द्वैध नीति तथा दो प्रकार की सेवाएँ होंगी किन्तु इसका एक अपवाद भी होगा। यह पाया गया कि प्रत्येक देश में प्रशासन में कुछ विशेष पद, प्रशासन के स्तर को बनाये रखने के लिये रणनीतिक पद कहे जाते हैं। निःसंदेह प्रशासन का स्तर इन रणनीतिक पदों पर नियुक्त किये जाने वाले

लोक सेवकों की दक्षता पर निर्भर करता है। संविधान ने भी बिना किसी भेदभाव के राज्यों को यह अधिकार दिया है कि वे अपनी लोक सेवाओं का गठन करें। अखिल भारतीय सेवा हेतु अखिल भारतीय स्तर पर इनका आयोजन किया जाये। इसके द्वारा चयनित प्रशासकों हेतु अखिल भारतीय सेवाओं के समान वेतन-भत्ते हों तथा इन्हें रणनीतिक या मुख्य पदों पर नियुक्ति के समान अवसर होने चाहिये⁸।”

लोक सेवा आयोग

लोक सेवा आयोग के क्षेत्र में केंद्र राज्य संबंध निम्नवत हैं:

- (i) राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष व सदस्यों की नियुक्ति यद्यपि राज्यपाल द्वारा की जाती है लेकिन उन्हें सिर्फ राष्ट्रपति द्वारा हटाया जा सकता है।
- (ii) संसद, संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग (जेएसपीएससी) का गठन संबंधित विधानमंडलों के अनुरोध पर कर सकती है। इसके अध्यक्ष और सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है।
- (iii) राज्यपाल के अनुरोध एवं राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) राज्य की आवश्यकतानुसार कार्य कर सकता है।
- (iv) संघ लोक सेवा आयोग योजनाओं के क्रियान्वयन, संयुक्त भर्ती आदि पर राज्यों की सहायता (दो या अधिक राज्यों के अनुरोध पर) करता है।

एकीकृत न्याय व्यवस्था

यद्यपि भारत में दोहरी राजनीतिक व्यवस्था अपनायी गयी है तथापि न्याय के प्रशासन में द्वैध नीति नहीं है। दूसरी ओर संविधान ने एकीकृत न्याय व्यवस्था की स्थापना की है। इसमें उच्चतम न्यायालय सर्वोच्च स्तर पर एवं उच्च न्यायालय इसके नीचे हैं। यह एकल व्यवस्था ही केन्द्र एवं राज्य दोनों के विधानों का अनुपालन सुनिश्चित करती है। यह व्यवस्था पारस्परिक टकराव एवं भ्रांति को समाप्त करने हेतु अपनायी गयी है।

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति, राष्ट्रपति द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश एवं संबंधित राज्य के राज्यपाल के परामर्श से की जाती है। इन्हें राष्ट्रपति द्वारा स्थानांतरित किया जा सकता है एवं पद से हटाया भी जा सकता है।

संसद, विधान बनाकर दो या दो से अधिक राज्यों के लिये एक ही उच्च न्यायालय की स्थापना कर सकती है। उदाहरणार्थ

महाराष्ट्र एवं गोवा या पंजाब एवं हरियाणा का एक ही उच्च न्यायालय है।

आपातकालीन अवधि में संबंध

- (i) राष्ट्रीय आपातकाल के समय (अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत)⁸, केन्द्र को इस बात का अधिकार प्राप्त हो जाता है कि वह किसी भी विषय पर राज्य या राज्यों को निर्देशित कर सकता है। इस प्रकार इस स्थिति में राज्य पूर्णतया केन्द्र के नियंत्रणाधीन हो जाते हैं। यद्यपि उन्हें निलंबित नहीं किया जाता।
- (ii) जब राज्य में राष्ट्रपति शासन (अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत) लागू किया जाता है तो राज्य के कार्यकारी विषयों के संबंध में राष्ट्रपति स्वयं निर्देश दे सकता है। इस स्थिति में राज्य या राज्यपाल या अन्य कार्यकारी प्राधिकारी की समस्त शक्तियां राष्ट्रपति ग्रहण कर सकता है।
- (iii) वित्तीय आपातकाल की स्थिति में (अनुच्छेद 360 के अन्तर्गत) केन्द्र वित्तीय परिसंपत्तियों के अधिग्रहण हेतु राज्यों को निर्देशित कर सकता है तथा राष्ट्रपति, राज्य में कार्यरत सरकारी कर्मचारियों एवं उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन में कटौती करने का आदेश दे सकते हैं।

अन्य उपबंध

संविधान, राज्य के प्रशासन पर केंद्र के नियंत्रण को लेकर निम्नलिखित अन्य उपबंध करता है:

- (i) अनुच्छेद 355 केंद्र पर दो कर्तव्यों को लागू करता है—
(अ) बाह्य आक्रमण एवं आंतरिक अशांति से प्रत्येक राज्य की संरक्षा करे और (ब) यह सुनिश्चित करना कि प्रत्येक राज्य की सरकार संविधान की व्यवस्थाओं के अनुरूप कार्य कर रही है या नहीं।
- (ii) राज्यों के राज्यपालों को राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है। उसका कार्यकाल राष्ट्रपति की दया पर निर्भर करता है। राज्य का सांविधानिक अध्यक्ष होने के अतिरिक्त राज्यपाल केन्द्र के एजेन्ट के रूप में कार्य करता है। वह राज्य के प्रशासनिक मामलों की रिपोर्ट समय-समय पर केंद्र को देता है।

- (iii) राज्य निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति यद्यपि राज्यपाल द्वारा की जाती है लेकिन उसे राष्ट्रपति द्वारा ही हटाया जा सकता है।

संविधानेतर युक्तियां

उपरोक्त वर्णित संवैधानिक युक्तियों के अतिरिक्त केन्द्र एवं राज्यों के मध्य सहयोग एवं समन्वयन हेतु कई अन्य संविधानेतर युक्तियां भी हैं। इनमें बड़ी संख्या में परामर्शदात्री निकाय एवं केन्द्र के स्तर पर आयोजित सम्मेलन आदि शामिल हैं।

अब नीति आयोग गैर-संवैधानिक परामर्शदात्री निकायों में शामिल हैं—योजना आयोग (अब नीति आयोग)⁹, राष्ट्रीय विकास परिषद, राष्ट्रीय एकता परिषद¹⁰, केन्द्रीय स्वास्थ्य परिषद, केन्द्रीय स्थानीय शासन एवं शहरी विकास परिषद, क्षेत्रीय परिषदें¹¹, उत्तर-पूर्व परिषद, केन्द्रीय भारतीय चिकित्सा परिषद, केन्द्रीय होम्योपैथिक परिषद, केन्द्रीय परिवार कल्याण परिषद, परिवहन विकास परिषद, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग इत्यादि।

केन्द्र-राज्य संबंधों के विकास हेतु या तो वार्षिक या आवश्यकतानुसार विभिन्न विषयों पर विचार-विमर्श किया जाता है। ये विषय इस प्रकार हैं—(i) राज्यपालों का सम्मेलन (इसकी अध्यक्षता राष्ट्रपति करता है), (ii) मुख्यमंत्रियों का सम्मेलन (इसकी अध्यक्षता प्रधानमंत्री करता है), (iii) मुख्य सचिवों का सम्मेलन (इसकी अध्यक्षता कैबिनेट सचिव करता है), (iv) पुलिस महानिदेशकों का सम्मेलन, (v) मुख्य न्यायाधीशों का सम्मेलन (इसकी अध्यक्षता उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश करता है), (vi) कुलपतियों का सम्मेलन, (vii) गृह मंत्रियों का सम्मेलन, (इसकी अध्यक्षता केन्द्रीय गृह मंत्री करता है) एवं (viii) विधि मंत्रियों का सम्मेलन (इसकी अध्यक्षता केन्द्रीय विधि मंत्री करता है)।

वित्तीय संबंध

संविधान के भाग XII में अनुच्छेद 268 से 293 तक केंद्र-राज्य वित्तीय संबंधों की चर्चा की गई है। इसके अलावा इसी विषय पर कई अन्य उपबंध भी हैं। इन्हें हम निम्नलिखित शीर्षकों से समझ सकते हैं:

कराधान शक्तियों का आवंटन

संविधान ने केंद्र व राज्यों के बीच निम्नलिखित तरीके से कर शक्तियों का आवंटन किया:

- संसद के पास संघ सूची (जिनकी संख्या 15 है)¹² के बारे में कर निर्धारण का विशेष अधिकार है।
- राज्य विधानमंडल के पास राज्य सूची (जिनकी संख्या 20 है)¹³ पर कर निर्धारण का विशेष अधिकार है।
- संसद व राज्य विधानमंडल, दोनों को समवर्ती सूची (जो संख्या में 3 हैं)¹⁴ पर कर निर्धारण का अधिकार है।
- कर निर्धारण की अवशेषीय शक्ति संसद में निहित है। इस उपबंध के तहत संसद ने उपहार कर, समृद्धि कर और व्यय कर लगाए हैं।

संविधान कर की उगाही और संक्रमण की शक्ति में स्पष्ट अंतर करता है और इस प्रकार कर की उगाही और एकत्रित कर की प्राप्ति के उपयोग की शक्ति का भी निर्धारण करता है। उदाहरण के लिए आयकर की उगाही और एकत्रण केंद्र द्वारा किया जाता है। परंतु इसकी प्राप्ति को केंद्र और राज्यों के मध्य बांटा जाता है।

इसके अतिरिक्त संविधान ने राज्यों की कर निर्धारण शक्ति पर निम्नलिखित पाबंदियां भी लगाई हैं:

- (i) विधानमंडल व्यवसाय, व्यापार एवं रोजगार पर कर लगा सकता है लेकिन एक व्यक्ति पर यह 2,500 रु. प्रतिवर्ष से अधिक नहीं होना चाहिए।¹⁵
- (ii) राज्य विधानमंडल वस्तुओं की खरीद-बिक्री (समाचार-पत्रों के अतिरिक्त) पर कर लगा सकता है। लेकिन ऐसी शक्तियों पर चार पाबंदियां हैं—(अ) राज्य के बाहर किसी वस्तु की खरीद-बिक्री पर कर नहीं लगाया जा सकता। (ब) आयात या निर्यात के दौरान खरीद-बिक्री पर कर नहीं लगाया जा सकता। (स) अंतर्राज्यीय व्यापार एवं वाणिज्य के दौरान किसी खरीद-बिक्री पर कर नहीं लगाया जा सकता। (द) संसद द्वारा अंतर्राज्यीय व्यापार एवं वाणिज्य के तहत महत्वपूर्ण घोषित मसलों पर क्रय-विक्रय के आधार पर प्रतिबंध।¹⁶
- (iii) राज्य विधानमंडल बिजली की बिक्री व उसके उपभोग पर कर लगा सकता है लेकिन ऐसी बिजली की बिक्री या उपभोग पर कर नहीं लगाया जा सकता जो (अ) केंद्र द्वारा उपभोग की जाने वाली और केंद्र को बेची जाने वाली हो या। (ब) रेलवे के किसी रख-रखाव

कार्य में उपभोग की जा रही हो या संबंधित रेलवे निर्माण में कार्यरत किसी केंद्रीय कंपनी को बेची जा रही हो।

- (iv) राज्य विधानमंडल किसी अंतर-राज्य नदी या नदी धारा के विनियमन या विकास हेतु संसद द्वारा स्थापित किसी प्राधिकरण को किसी पानी या बिजली एकत्रीकरण उत्पादन, खपत, वितरण या बिक्री पर कर निर्धारण कर सकती है लेकिन ऐसे किसी कानून को प्रभावी बनाने से पूर्व राष्ट्रपति की सिफारिश को सुरक्षित रखना होगा और उसकी सहमति लेनी होगी।

कर राजस्व का वितरण

80वें संशोधन अधिनियम, 2000 तथा 88वें संशोधन, 2003 द्वारा केंद्र-राज्य के बीच कर राजस्व बंटवारे की योजना पर व्यापक परिवर्तन किया गया। 80वां संशोधन 10वें वित्त आयोग की सिफारिशों को प्रभावी करने के लिए लागू किया गया था। आयोग ने सिफारिश की थी कि कुछ केंद्रीय करों एवं कराधानों से प्राप्त कुल आय का 29 प्रतिशत राज्यों को मिलना चाहिए। इसे 'अवमूल्यन की वैकल्पिक योजना' के रूप में जाना गया तथा यह पूर्वव्यापी 1 अप्रैल, 1996 से अस्तित्व में आया। इस संशोधन से आयकर के साथ ही कई अन्य करों, जैसे-निगम कर, कस्टम ड्यूटी आदि का प्रावधान किया गया।¹⁷

88वें संविधान संशोधन से संविधान में एक नया अनुच्छेद 268-क जोड़ा गया, जो सेवा कर से संबंधित है। इसने केंद्र सूची में भी एक नया विषय-प्रविष्टि 92-ग जोड़ा (सेवाओं पर कर)। सेवा कर केन्द्र द्वारा लगाया जाता है लेकिन इसका संग्रहण राज्य करते हैं। इसके उपरांत इसका केंद्र एवं राज्यों के मध्य युक्तियुक्त बंटवारा होता है।

इन दो संशोधनों के उपरांत केंद्र एवं राज्यों के मध्य करों के बंटवारे का विभाजन निम्नानुसार होता है:

1. केंद्र द्वारा उद्गृहीत एवं राज्यों द्वारा संगृहीत एवं विनियोजित कर (अनुच्छेद 268)

इस श्रेणी में अग्रलिखित कर एवं शुल्क आते हैं:

- (i) विनिमय पत्रों, चेकों, वादा नोटों, नीतियों, बीमा तथा शेयरों एवं अन्य के अंतरण पर लगाने वाला स्टाम्प शुल्क।

- (ii) औषधीय एवं प्रसाधन की वस्तुएं, जिनमें एल्कोहल एवं नारकोटिक्स शामिल हैं, पर उत्पाद शुल्क।

किसी राज्य से उगाही की गई इन शुल्कों की प्राप्तियां भारत की समेकित निधि का भाग नहीं होतीं बल्कि उसी राज्य को दी जाती हैं।

2. केंद्र द्वारा उद्गृहीत सेवा कर लेकिन केंद्र एवं राज्यों द्वारा संगृहीत एवं विनियोजित कर (अनुच्छेद 268-क)

सेवाओं पर कर केंद्र द्वारा लगाया जाता है। लेकिन इनका संग्रहण एवं उपयोग केंद्र एवं राज्य दोनों मिलकर करते हैं। इनके संग्रहण एवं उपभोग संबंधी नियमों का निर्धारण संसद द्वारा किया जाता है।

3. संघ द्वारा उद्गृहीत एवं संगृहीत किन्तु राज्यों को सौंपे जाने वाले कर (अनुच्छेद 269)

इस श्रेणी में अग्रलिखित कर आते हैं:

- अंतर-राज्यीय व्यापार या वाणिज्य में वस्तुओं के क्रय-विक्रय से संबंधित कर (समाचार-पत्र को छोड़कर)।
- माल या समान के अंतर-राज्यीय व्यापार या वाणिज्य के पारेषण से संबंधित कर। इन करों से प्राप्तियां भारत की समेकित निधि का भाग नहीं बनतीं। इन्हें संसद द्वारा निर्धारित नियमों अनुसार संबंधित राज्य को सौंप दिया जाता है।

4. संघ द्वारा उद्गृहीत एवं संगृहीत किये जाने वाले तथा केन्द्र एवं राज्यों के बीच बंटने वाले कर बंटवारे की उक्त व्यवस्था (अनुच्छेद 270)

इस श्रेणी में संघ सूची में उल्लिखित सभी कर और शुल्क आते हैं:

- संविधान के अनुच्छेद 268, 268-क तथा 269 में उल्लिखित कर (ऊपर उल्लिखित)।
- संविधान के अनुच्छेद 271 में उल्लिखित कर (नीचे उल्लिखित) पर अधिभार।
- किसी विशिष्ट प्रायोजन के लिये लगाया गया कोई सेस।

इन करों और शुल्कों की कुल प्राप्तिओं के वितरण की प्रक्रिया राष्ट्रपति द्वारा वित्त आयोग की सिफारिश पर अनुशासित की जाती है।

5. कुछ शुल्कों और करों पर संघ के प्रयोजनों के लिए अधिभार (अनुच्छेद 271)

संसद किसी भी समय उपरोक्त वर्णित द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी के करों पर अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिये (अनुच्छेद 269 एवं 270 में उल्लिखित) अविभार लगा सकता है। ये सीधे केंद्र को प्राप्त होते हैं। दूसरे शब्दों में, राज्यों को इनका कोई हिस्सा प्राप्त नहीं होता है।

6. राज्यों द्वारा उद्गृहीत, संगृहीत एवं उपभोग किये जाने वाले कर

ये पूर्णतया राज्यों के कर हैं। इनका उल्लेख राज्य सूची में किया गया है तथा इनकी संख्या 20 है। ये इस प्रकार हैं¹⁸—(i) भू-राजस्व (ii) कृषि आय कर कृषि भूमि के उत्तराधिकार संपदा शुल्क (iii) भूमि एवं भवनों, खनिज अधिकारों, पशु एवं नावों, सड़कों पर चलने वाले वाहन, विलासिता, मनोरंजन एवं जुए पर कर (iv) मानवीय उपयोग के लिए एल्कोहलिक लिकर और मादक पदार्थों पर उत्पाद शुल्क (v) सड़क परिवहन के माध्यम से राज्यों में प्रविष्ट होने वाली वस्तुओं पर लगने वाले कर विज्ञापन (सिवाए समाचार-पत्र), बिजली की खपत या बिक्री और सड़क या जलमार्ग से जाने वाले यात्रियों पर लगने वाले कर (vi) वृत्तियों, व्यापारों, आजीविकाओं और नियोजन पर कर, प्रति वर्ष 2500 रु. से अधिक नहीं (vii) प्रति व्यक्ति कर (viii) पथकर (ix) बिक्री कर (समाचार-पत्र को छोड़कर) (x) राज्य सूची में वर्णित विषयों से प्राप्त होने वाली फीस (न्यायालय की फीस को छोड़कर)।

गैर-कर राजस्व का वितरण

(अ) केंद्र : केंद्र के गैर-राजस्व स्रोतों से व्यापक प्राप्तियां निम्नलिखित से हैं—(i) डाक एवं तार, (ii) रेलवे, (iii) बैंकिंग, (iv) प्रसारण, (v) सिक्के एवं मुद्रा, (vi) केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रम और (vii) समयावधि समाप्त होने पर उगाही।¹⁹

(ब) राज्य : गैर-राजस्व कर के द्वारा राज्य को प्राप्त व्यापक स्रोत इस तरह हैं—(i) संचाई, (ii) वन, (iii) मत्स्य पालन, (iv) राज्य सार्वजनिक उपक्रम और (v) समय चूकने पर उगाही।²⁰

राज्यों के लिए सहायतार्थ अनुदान

केंद्र एवं राज्यों के बीच करों की हिस्सेदारी के संविधान में व्यवस्था की गई है कि राज्यों को केन्द्र से सहायतार्थ अनुदान प्राप्त हो। अनुदान दो प्रकार के होते हैं—विधिक अनुदान एवं विवेकाधीन अनुदान।

विधिक अनुदान: अनुच्छेद 275 संसद को इस बात का अधिकार प्रदान करता है कि वह राज्यों को आवश्यकता पड़ने पर अनुदान उपलब्ध कराये। यद्यपि प्रत्येक राज्य के लिये ऐसा करना आवश्यक नहीं है। इसके अलावा अलग-अलग राज्यों के लिये सहायता राशि भी भिन्न-भिन्न निर्धारित की जा सकती है। यह राशि प्रत्येक वर्ग भारत की संचित निधि पर भारित होती है।

इस सामान्य प्रावधान के अतिरिक्त संविधान राज्यों में जनजातियों के उत्थान एवं कल्याण तथा अनुसूचित जनजाति बाहुल्य राज्यों में प्रशासनिक विकास के लिये भी राज्यों को विशेष सहायता प्रदान करने की शक्ति संसद को देता है ऐसे राज्यों में असम भी सम्मिलित है।

अनुच्छेद 275 के अन्तर्गत वर्णित यह अनुदान (सामान्य एवं विशेष) वित्त आयोग की अनुशंसा पर दी जाती है।

विवेकाधीन अनुदान: अनुच्छेद 282 संघ एवं राज्य दोनों को इस बात का अधिकार देता है कि किसी लोक प्रयोजन के लिये वे अनुदान आवंटित कर सकते हैं। इस प्रावधान के अन्तर्गत केन्द्र राज्यों को अनुदान प्रदान कर सकते हैं।

‘इन अनुदानों को विवेकाधीन अनुदान के नाम से जाना जाता है। इसका कारण यह है कि इसके लिये केन्द्र बाध्य नहीं है तथा यह पूर्णतया उसके स्वविवेक पर निर्भर करता है। इन अनुदानों के दो उद्देश्य होते हैं—योजनागत लक्ष्यों की प्राप्ति के निमित्त राज्यों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना तथा राष्ट्रीय योजना के लिये राज्यों को प्रभावित करना।’²¹

उल्लेखनीय है कि विवेकाधीन अनुदान केन्द्र द्वारा राज्यों को प्राप्त होने वाली सहायता का एक बड़ा हिस्सा होते हैं। (विशेष तथा विधिक अनुदान की तुलना में)²²

अन्य अनुदान: संविधान एक अन्य तरह के अनुदान की भी व्यवस्था करता है किंतु यह अल्प अवधि के लिए होता है। इस प्रकार, जूट एवं जूट उत्पादों (असम, बिहार, उड़ीसा एवं

प. बंगाल के लिये) के निर्यात शुल्क की जगह अनुदान का प्रावधान किया गया था। यह अनुदान संविधान प्रारंभ होने से 10 वर्ष की अवधि के लिये किये गये थे। ये अनुदान भारत की संचित निधि पर भारित थे तथा वित्त आयोग की अनुशंसा पर राज्यों को उपलब्ध कराये गये थे।

वित्त आयोग

अनुच्छेद 280 अर्ध न्यायिक निकाय के रूप में वित्त आयोग की व्यवस्था करता है। इसका गठन हर पांच वर्ष में राष्ट्रपति द्वारा स्थापित किया जाता है। यह निम्नलिखित मामलों पर राष्ट्रपति को सिफारिश करता है:

- केंद्र एवं राज्यों के बीच कराधान व्यवस्था का निर्धारण और ऐसी प्राप्ति का राज्यों के बीच हिस्सेदारी का निर्धारण।
- वे सिद्धांत, जिनके तहत राज्य केंद्र (भारत की संचित निधि से) से आर्थिक अनुदान लेकर कार्य करता है।
- राज्य वित्त आयोग की संस्तुति के आधार पर राज्य पंचायतों और नगरपालिकों के स्रोतों की पूर्ति के लिए राज्य की संचित निधि को बढ़ाने के लिए किए जाने वाले उपाय²³
- राष्ट्रपति द्वारा वित्तीय मामलों के संबंध में सौंपा गया कोई अन्य कार्य।

1960 तक आयोग असम, बिहार, ओडीशा एवं प. बंगाल के लिये जूट एवं जूट उत्पादों के निर्यात शुल्क के ऐवज में प्रतिवर्ष प्रदान किये जाने वाले अनुदान के संबंध में सरकार को सुझाव देता था।

संविधान वित्त आयोग को देश में वित्तीय संघात्मकता के संतुलन चक्र के रूप में परिकल्पित करता है। यद्यपि गैर-संवैधानिक, गैर-विधायी निकाय योजना आयोग के उद्भव के उपरांत केन्द्र-राज्य संबंधों के संदर्भ में वित्त आयोग की भूमिका संकुचित हुयी है।

राज्यों के हितों का संरक्षण

वित्तीय मामलों पर राज्य हितों की रक्षा के लिए संविधान में यह व्यवस्था की गई है कि संसद सिर्फ राष्ट्रपति की सिफारिश पर निम्नलिखित विधेयकों को संसद में प्रस्तुत करे:

- ऐसा विधेयक जिसमें राज्यों का हित हो और वह किसी कर या शुल्क को अध्यारोपित करे।
- ऐसा विधेयक जो भारतीय आयकर को लागू करने संबंधी प्रयोजनों हेतु परिभाषित अभिव्यक्ति कृषि आय के अर्थ में परिवर्तन करे।
- ऐसा विधेयक जो राज्यों में वितरित या वितरण की जाने वाली राशियों के नियम को प्रभावित करे।
- ऐसा विधेयक जो राज्य के प्रयोजन हेतु किसी विशिष्ट कर या शुल्क पर अधिभार अध्यारोपित करे।

कर या शुल्क जिसमें राज्य का हित हो अभिव्यक्ति का अर्थ है—(क) कर या शुल्क जिसकी कुल प्राप्तियों का पूर्ण या कोई भाग किसी राज्य को सौंपा जाता है, या (ख) शुल्क जहां कुल प्राप्तियों के संदर्भ में फिलहाल इस राशि को भारत की संचित निधि से प्रदान किया जाता है।

कुल प्राप्तियां अभिव्यक्ति का अर्थ है—संग्रहण की लागत को घटाकर प्राप्त हुई कर या शुल्क प्राप्तियां, किसी क्षेत्र में कर या शुल्क की कुल प्राप्तियों का निर्धारण और प्रमाणन भारत के नियंत्रक और महालेख परीक्षक द्वारा किया जाता है।

केंद्र एवं राज्यों द्वारा ऋण

संविधान केंद्र एवं राज्यों के कर्ज लेने की शक्ति पर निम्नलिखित प्रावधान तय करता है:

- केंद्र सरकार या तो भारत में या इसके बाहर से भारत की संचित निधि की प्रतिभू या गारंटी देकर ऋण ले सकती है। लेकिन दोनों ही मामलों में सीमा निर्धारण संसद द्वारा किया जाएगा। संसद द्वारा इस संबंध में कोई कानून नहीं बनाया गया है।
- इसी तरह, एक राज्य सरकार भारत में (बाहर नहीं) राज्य की संचित निधि की प्रतिभू या गारंटी देकर ऋण ले सकता है, लेकिन सीमा निर्धारण राज्य विधानमंडल द्वारा किया जाएगा।
- केंद्र सरकार किसी राज्य सरकार को ऋण दे सकती है या किसी राज्य द्वारा लेने पर गारंटी दे सकती है। ऋण के ऐसे प्रयोजन हेतु आवश्यक धनराशि भारत की संचित निधि पर भारित होगी।

- राज्य केन्द्र की अनुमति के बिना ऋण नहीं ले सकता, यदि केन्द्र द्वारा दिए गए ऋण का कोई भाग बकाया हो या जिसके संबंध में केन्द्र ने गारंटी दी हो।

अंतर-सरकारी कर उन्मुक्ति

अन्य संघीय संविधानों के समान भारतीय संविधान में भी 'पारस्परिक कराधान से उन्मुक्तियों' के नियम हैं। इस संबंध में निम्न प्रावधान किये गये हैं:

केन्द्र की परिसंपत्तियों को राज्य के कर से छूट

केन्द्र की सभी परिसंपत्तियों को राज्य या उसके विभिन्न निकायों, यथा—नगरपालिकाओं, जिला बोर्डों, पंचायतों इत्यादि को सभी प्रकार के करों से छूट प्राप्त होती है। यद्यपि संसद को यह अधिकार है कि वह इस प्रतिबंध को समाप्त कर सकती है। 'संपत्ति' शब्द से अभिप्राय भूमि, भवन, चल संपत्ति, शेयर, जमा इत्यादि उन सभी चीजों से है, जिनका कोई मूल्य होता है। संपत्ति में चल एवं अचल दोनों प्रकार की संपत्तियां सम्मिलित हैं। संपत्ति का उपयोग संप्रभु (जैसे—सशस्त्र सेनायें) या वाणिज्यिक प्रयोजनों के लिए किया जा सकता है।

केन्द्र सरकार द्वारा निर्मित निगमों या कंपनियों को राज्य कराधान या स्थानीय कराधान से उन्मुक्ति प्राप्त नहीं है। इसका कारण यह है कि निगम या कंपनी एक पृथक् विधिक अस्तित्व है।

राज्य की परिसंपत्तियों या आय को केन्द्रीय कर से छूट

राज्यों की परिसंपत्तियां एवं आय को भी केन्द्रीय कर से छूट प्राप्त होती है। यह आय संप्रभु कार्यों या वाणिज्यिक कार्यों से हो सकती है। किंतु यदि संसद अनुमति दे तो केन्द्र वाणिज्यिक आय पर कर लगा सकता है। यद्यपि केन्द्र चाहे तो वह किसी कार्य या व्यवसाय विशेष को इस कर से छूट भी दे सकता है।

उल्लेखनीय है कि राज्य में स्थित स्थानीय संस्थाएँ केन्द्रीय कर से मुक्त नहीं होती हैं। इसी तरह निगमों एवं राज्य की स्वामित्व वाली कंपनियों की परिसंपत्तियां एवं आय पर केंद्र कर लगा सकती है।

1963 में सर्वोच्च न्यायालय ने अपने एक सलाहकारी निर्णय में²⁴ यह सलाह दी थी कि केन्द्र द्वारा राज्यों को दी जाने वाली छूट ऐसी होनी चाहिये, जिससे सीमा और उत्पाद शुल्क पर कोई

प्रभाव न पड़े। दूसरे शब्दों में, केंद्र, राज्य द्वारा आयातित या निर्यातित वस्तुओं पर कर लगा सकती है या वह राज्य में उत्पादित या विनिर्मित सामान पर उत्पाद शुल्क लगा सकती है।

आपातकाल के प्रभाव

केंद्र-राज्य के बीच संबंध आपातकाल के दौरान बदल जाते हैं। ये निम्नलिखित हैं:

राष्ट्रीय आपातकाल

जब राष्ट्रीय आपातकाल लागू हो (अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत) राष्ट्रपति केंद्र व राज्यों के बीच संवैधानिक राजस्व वितरण को परिवर्तित कर सकता है। इसका तात्पर्य है राष्ट्रपति या तो वित्तीय अंतरण को कम कर सकता है या रोक सकता है। ऐसे परिवर्तन जिस वर्ष आपातकाल की घोषणा की गई हो उस वित्तीय वर्ष की समाप्ति तक प्रभावी रहते हैं।

वित्तीय आपातकाल

जब वित्तीय आपातकाल (अनुच्छेद 360 के अन्तर्गत) लागू हो केंद्र राज्यों को निर्देश दे सकता है—(i) वित्तीय औचित्य संबंधी सिद्धांतों का पालन, (ii) राज्य की सेवा में लगे सभी वर्गों के लोगों के वेतन एवं भत्ते कम करे (उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों समेत), और; (iii) सभी धन विधेयकों या अन्य वित्तीय विधेयकों को राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए आरक्षित रखे।

केंद्र-राज्य संबंधों में प्रवृत्तियाँ

1967 तक केंद्र-राज्य संबंध व्यापक एवं सामान्य बने रहे क्योंकि केंद्र एवं ज्यादातर राज्यों में एक ही दल का शासन था। 1967 के चुनाव में कांग्रेस पार्टी 9 राज्यों में हार गई जिससे केंद्र में उसकी स्थिति कमजोर हुई। इससे केंद्र-राज्य संबंध के राजनीतिक परिदृश्य में नया परिवर्तन आया। राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकारों ने कई मसलों पर केंद्रीयकरण का विरोध किया। उन्होंने राज्यों की स्वायत्तता का मुद्दा उठाया और ज्यादा शक्तियाँ एवं वित्तीय स्रोतों की मांग की। इसने केंद्र-राज्य संबंधों में टकराव व तनाव की स्थिति पैदा कर दी।

केंद्र-राज्य संबंधों के तनाव संभाव्य क्षेत्र

जिन मुद्दों के कारण केंद्र और राज्यों के बीच तनाव व टकराव पैदा हुआ, वे हैं—(1) राज्यपाल की नियुक्ति एवं बर्खास्तगी का तरीका, (2) राज्यपाल का पार्टीवादी व पक्षपातपूर्ण रवैया,

(3) पार्टी हित में राष्ट्रपति शासन को लगाना, (4) राज्य में कानून एवं व्यवस्था बनाने के लिए केंद्रीय बलों की तैनाती, (5) राज्य विधेयकों को राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए आरक्षित रखना, (6) राज्य के लिए वित्तीय आवंटन में भेदभाव, (7) राज्य नीतियों के अनुपालन में योजना आयोग की भूमिका, (8) अखिल भारतीय सेवाओं (आईएएस, आईपीएस व आइएफएस) का प्रबंधन, (9) राजनीतिक उद्देश्यों के लिए इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का प्रयोग, (10) मुख्यमंत्री के विरुद्ध जांच आयोग की नियुक्ति, (11) केंद्र एवं राज्यों के मध्य वित्तीय हिस्सेदारी, और (12) राज्य सूची में केंद्र द्वारा अतिक्रमण।

1960 के दशक के मध्य से ही केन्द्र-राज्य संबंधों पर विचार किया जा रहा है। केंद्र-राज्य संबंधों के मुद्दों पर निम्नलिखित कार्य हुए:

प्रशासनिक सुधार आयोग

केंद्र सरकार ने मोरारजी देसाई (जिसका अनुसरण के हनुमंतैया ने किया) की अध्यक्षता में 1966 में प्रशासनिक सुधार आयोग एआरसी का गठन किया। इस आयोग की रिपोर्ट के अध्ययन के लिए एम.सी. शीतलवाड़ के अधीन एक दल का गठन किया और अंतिम रिपोर्ट 1969 को केंद्र सरकार को सौंपी गई। इसने केंद्र-राज्य संबंधों को सुधारने के लिए 22 सिफारिशें प्रस्तुत कीं। मुख्य सिफारिशें इस प्रकार हैं:

- संविधान के अनुच्छेद 263 के तहत एक अंतर्राज्यीय परिषद का गठन किया जाए।
- राज्यपाल के रूप में गैर-दलीय ऐसे व्यक्ति को नियुक्त किया जाए जिसका सार्वजनिक जीवन व प्रशासन में लंबा अनुभव हो।
- राज्य के लिए अधिकतम शक्तियों का प्रत्यायोजन।
- राज्यों को ज्यादा वित्तीय संसाधन स्थानांतरित कराए जाएं ताकि उनकी केंद्र पर निर्भरता कम रहे।
- उनके अनुरोध या अन्यथा पर ही राज्य में केंद्रीय सशस्त्र बलों की तैनाती हो।

राजमन्मार समिति

1969 में तमिलनाडु सरकार (डीएमके) ने डॉ. वी.पी. राजमन्मार की अध्यक्षता में केन्द्र-राज्य संबंधों की समीक्षा करने एवं राज्यों को स्वायत्तता दिलाने के लिये संविधान में संशोधन के सुझाव देने

हेतु तीन सदस्यीय समिति²⁵ का गठन किया गया। इस समिति ने 1971 में तमिलनाडु सरकार को अपना प्रतिवेदन सौंपा।

इस समिति ने केंद्र की एकात्मकता की प्रवृत्ति (केंद्रीयकरण की प्रवृत्ति) की समीक्षा की। इसमें शामिल थे:

- (i) संविधान के वे विशेष प्रावधान, जो केंद्र को विशेष शक्तियां प्रदान करते हैं।
- (ii) केंद्र एवं राज्यों, दोनों में एकल पार्टी की सरकार।
- (iii) राज्यों को संसाधनों की होने वाली कमी एवं इसके कारण केंद्र की सहायता पर उनकी निर्भरता।
- (iv) केंद्रीय नियोजन की संस्था एवं योजना आयोग की भूमिका।

इस समिति की महत्वपूर्ण सिफारिशें इस प्रकार थीं:

- (i) एक अंतर-राज्यीय परिषद का गठन किया जाये।
- (ii) योजना आयोग का स्थान एक सांविधि निकाय द्वारा लिया जाए।
- (iii) वित्त आयोग को एक स्थायी निकाय बना दिया जाये।
- (iv) अनुच्छेद 356, 357 एवं 365 (राष्ट्रपति शासन से संबंधित) को पूर्णतया समाप्त कर दिया जाये।
- (v) राज्यपाल के प्रसादपर्यंत राज्य मंत्रिपरिषद के पद धारित करने का जो प्रावधान है, उसे समाप्त कर दिया जाये।
- (vi) संघ सूची एवं समवर्ती सूची के कुछ विषयों को राज्य सूची में हस्तांतरित कर दिया जाये।
- (vii) राज्यों को अवशेषीय शक्तियां प्रदान की जायें। एवं
- (viii) अखिल भारतीय सेवाओं (आईएएस, आईपीएस एवं आईएफएस) को समाप्त कर दिया जाये।

केंद्र सरकार ने राजामन्त्रार समिति की सिफारिशों को पूरी तरह से खारिज कर दिया।

आनंदपुर साहिब प्रस्ताव

1973 में, अकाली दल पंजाब के आनंदपुर साहिब में हुयी एक बैठक में राज्यों की धार्मिक एवं राजनैतिक मांगों के संबंध में एक प्रस्ताव को स्वीकृति दी। इस प्रस्ताव में कहा गया कि केन्द्र को मात्र रक्षा, विदेशी संबंध, संचार एवं मुद्रा के अतिरिक्त अन्य सभी विषय राज्यों को सौंप देने चाहिये। इसमें कहा गया कि संविधान को वास्तविक रूप में संघीय बनाया जाना चाहिए और

केन्द्र में सभी राज्यों के लिए समान प्राधिकार और प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

पश्चिम बंगाल स्मरण पत्र

1977 में, पश्चिम बंगाल सरकार (जिसका नेतृत्व साम्यवादियों के हाथों में था) ने केंद्र-राज्य संबंधों पर एक स्मरण पत्र या मेमोरैंडम प्रकाशित किया तथा उसे केंद्र सरकार को प्रेषित किया। इस स्मरण पत्र में अन्य बातों के साथ-साथ निम्न सुझाव दिये गये:

- (i) संविधान में उल्लिखित शब्द 'संघ' की जगह 'संघीय' शब्द रखा जाये।
- (ii) केंद्र सरकार का कार्यक्षेत्र रक्षा, विदेशी मामले, संचार एवं आर्थिक समन्वय तक ही सीमित रहना चाहिये।
- (iii) अन्य सभी मामलों पर राज्यों को शक्ति दी जाये।
- (iv) अनुच्छेद 356, 357 एवं 360 (राष्ट्रपति शासन से संबंधित) को पूर्णतया समाप्त कर दिया जाये।
- (v) नये राज्यों के निर्माण एवं वर्तमान राज्यों के पुर्नगठन में राज्यों की सहमति अनिवार्य बनायी जाये।
- (vi) केंद्र द्वारा प्राप्त समस्त राजस्व का 75 प्रतिशत हिस्सा राज्यों को दिया जाये।
- (vii) राज्यसभा को लोकसभा के बराबर शक्तियां प्रदान की जायें।
- (viii) केवल केंद्र एवं राज्य सेवायें होनी चाहिये तथा अखिल भारतीय सेवाओं को पूर्णतया समाप्त कर दिया जाना चाहिये।

केन्द्र सरकार ने इस ज्ञापन में की गयी मांगों को स्वीकार नहीं किया।

सरकारिया आयोग

1983 में केंद्र सरकार ने उच्चतम न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश आर.एस.सरकारिया की अध्यक्षता में केंद्र-राज्य संबंधों पर एक तीन सदस्यीय आयोग का गठन किया।²⁶ आयोग से कहा गया कि वह केंद्र और सरकार के बीच सभी व्यवस्थाओं व कार्य पद्धतियों का परीक्षण करे और इस संबंध में उचित परिवर्तन व प्रामाणिक सिफारिशें प्रदान करे। इसे अपने काम को पूरा करने के लिए एक वर्ष का समय दिया गया, तथापि इसका कार्यकाल चार बार बढ़ाया पड़ा। अंतिम रिपोर्ट अक्टूबर 1987 में पेश की

गई और इसका सार आधिकारिक तौर पर जनवरी, 1988 में जारी किया गया।

आयोग ढांचागत परिवर्तन के पक्ष में नहीं था। इसने महसूस किया कि मूल रूप से संवैधानिक व्यवस्था और सिद्धांत रूप से मूल संस्थात्मक संरचना ठीक है लेकिन इसने इस बात पर बल दिया कि प्रचानात्मक एवं कार्यात्मक स्तर पर परिवर्तन हो। इसने महसूस किया कि स्थायी संस्था मामले के मुकाबले में संधीयता सहयोगी क्रिया के लिए ज्यादा क्रियात्मक व्यवस्था है। इसने इस मांग को पूर्णतः खारिज कर दिया कि केंद्र की शक्तियों में कटौती हो, बल्कि इसने स्पष्ट किया कि राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता के लिए मजबूत केंद्र का होना आवश्यक है। जिसे विखंडनीय प्रवृत्तियों द्वारा चुनौती दी जा रही है। हालांकि उसने सशक्त केंद्र का मतलब यह नहीं बताया कि शक्तियों का केंद्रीकरण हो। इसने यह भी पाया कि केन्द्र में शक्तियों के अधिक संक्रेन्द्रण से निर्णय लेने का दबाव रहता जबकि राज्य निर्णयविहीन रहते हैं।

आयोग ने केंद्र-राज्य संबंधों की सुधार की दिशा में 247 सिफारिशें प्रस्तुत कीं। इनमें से महत्वपूर्ण सिफारिशें इस प्रकार हैं:

1. एक स्थायी अंतर्राज्यीय परिषद हो जिसे अंतर-सरकारी परिषद कहा जाना चाहिए। इसकी स्थापना अनुच्छेद 263 के तहत होनी चाहिए।
2. अनुच्छेद 356 (राष्ट्रपति शासन) को बहुत संभलकर इस्तेमाल किया जाए। इसका तभी इस्तेमाल हो जब सभी उपलब्ध विकल्प समाप्त हो जाएं।
3. अखिल भारतीय सेवाओं के संस्थान को और अधिक मजबूत बनाना चाहिए और ऐसी ही कुछ सेवाओं का निर्माण किया जाना चाहिए।
4. कराधान की शक्ति संसद में ही निहित रहनी चाहिए, जबकि अन्य शक्तियों को समवर्ती सूची में शामिल किया जाना चाहिए।
5. जब राष्ट्रपति राज्य के किसी विधेयक को स्वीकृति के लिए आरक्षित करे तो इसका कारण राज्य सरकार को बताया जाना चाहिए।
6. राष्ट्रीय विकास परिषद (एनडीसी) का नाम बदलकर इसे राष्ट्रीय आर्थिक एवं विकास परिषद (एनईडीसी) किया जाना चाहिए।

7. क्षेत्रीय परिषदें बनानी चाहिए और इन्हें संधीयता के मामले में प्रोत्साहित करना चाहिए।
8. केंद्र को बिना राज्य की स्वीकृति के सैन्य बलों की तैनाती की शक्ति प्राप्त होनी चाहिए यहां तक कि यह राज्यों की सहमति के बिना भी किया जा सकता है। तथापि यह वांछनीय है कि राज्यों से परामर्श किया जाए।
9. समवर्ती सूची के विषयों पर कानून बनाने से पहले केंद्र को राज्य से परामर्श करना चाहिए।
10. राज्यपाल की नियुक्ति पर मुख्यमंत्री की सलाह की व्यवस्था को स्वयं संविधान में निर्दिष्ट किया जाना चाहिए।
11. निगम कर की कुल प्राप्तियों को राज्यों के साथ निश्चित सीमा में बांटा जाना चाहिए।
12. राज्यपाल विधानसभा में बहुमत की स्थिति पर सरकार को भंग नहीं कर सकता है।
13. राज्यपाल के 5 वर्ष के कार्यकाल को बिना ठोस कारणों के अतिरिक्त बाधित नहीं किया जाना चाहिए।
14. बिना संसद की मांग के किसी राज्यमंत्री के खिलाफ जांच आयोग नहीं बैठाना चाहिए।
15. केंद्र द्वारा आयकर पर अधिभार उगाही नहीं करनी चाहिए सिवाय विशेष उद्देश्य और सीमित समय के लिए।
16. योजना आयोग और वित्त आयोग के बीच कार्यों का वर्तमान बंटवारा उचित एवं निरंतर होना चाहिए।
17. त्रिभाषा, फॉर्मूला समान रूप से लागू करने की दिशा में कदम उठाना चाहिए।
18. रेडियो एवं टेलीविजन के लिए स्वायत्तता नहीं होनी चाहिए लेकिन इनके कार्यों का विकेंद्रीकरण होना चाहिए।
19. राज्यों के पुनर्गठन पर राज्यसभा की भूमिका एवं केंद्र की शक्ति में परिवर्तन नहीं होने चाहिए।
20. भाषागत अल्पसंख्यकों के लिए कमीशनरी प्रारंभ करना चाहिए।

केंद्र सरकार सरकारिया आयोग की 180 (247 में से) सिफारिशों को लागू कर चुकी है ²⁷ इसमें सबसे महत्वपूर्ण 1990 में केंद्र-राज्य परिषद का गठन है।

पुंछी आयोग

अप्रैल 2007 में केंद्र सरकार ने केंद्र-राज्य संबंधों की समीक्षा के लिये उच्चतम न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश मदन मोहन पुंछी की अध्यक्षता में एक आयोग का गठन किया।²⁸ इस आयोग का गठन इसलिये किया गया था कि दो दशक पहले गठित सरकारिया आयोग के बाद बदलते राजनीतिक एवं आर्थिक परिदृश्य के कारण काफी परिवर्तन हो चुके हैं। अतः नयी परिस्थितियों में केंद्र-राज्य संबंधों का पुनः आकलन किया जाना आवश्यक है।

इस आयोग के प्रमुख कार्य इस प्रकार थे:

- (i) आयोग को भारत के संविधान के अनुरूप वर्तमान परिप्रेक्ष्य में केंद्र-राज्य संबंधों की समीक्षा करना था। आयोग को स्वस्थ परंपराओं, शक्तियों के संबंध में उच्चतम न्यायालय के विशेष आदेश तथा विभिन्न क्षेत्रों में कार्य एवं उत्तरदायित्व, जिनमें शामिल थे—विधायी संबंध, प्रशासनिक संबंध, राज्यपाल की भूमिका, आपातकालीन उपबंध वित्तीय संबंध, आर्थिक एवं सामाजिक योजना, पंचायती राज संस्थान, संसाधनों का बंटवारा, जैसे-अंतर-राज्य नदी जल बंटवारा आदि के परिप्रेक्ष्य केंद्र सरकार को उचित सिफारिशें प्रस्तुत करनी थीं।
- (ii) आयोग को केंद्र एवं राज्यों के बीच संबंधों की वर्तमान स्थिति का आकलन करने एवं उनमें सुधार करने के लिये उचित सिफारिशें देनी थीं। इस संबंध में क्या रूकावटें या कठिनाइयां हैं, इसके बारे में भी सरकार को बताना था। आयोग को यह देखना था कि पिछले वर्षों में देश में विशेष रूप से पिछले दो दशकों में एवं संविधान की मंशा के अनुरूप सामाजिक एवं आर्थिक विकास की क्या स्थिति रही है तथा इसे तीव्र करने के लिये क्या किया जाना चाहिये। इन सिफारिशों में आयोग को यह भी बताना था राष्ट्र की एकता और अखंडता को अक्षुण्ण रखते हुए लोगों के कल्याण हेतु अच्छे शासन को सुनिश्चित करने हेतु नई चुनौतियों का किस प्रकार सामना किया जाए और नई सहस्राब्दि के प्रारंभिक दशकों में गरीबी और असाक्षरता उन्मूलन द्वारा भावी परिस्थितियों के अनुरूप सतत् और तीव्र आर्थिक वृद्धि कैसे प्राप्त की जाए।

(iii) उक्त मामलों का विवेचन करते समय एवं अपनी सिफारिशें देते समय आयोग को विशिष्ट भूमिका निभानी थी लेकिन उसे निम्न सीमाओं का भी ध्यान रखना था:

1. राज्यों के संबंध में केंद्र की भूमिका, दायित्व एवं कार्यक्षेत्र कैसा होना चाहिये, विशेष रूप से जब कोई राज्य लंबे समय तक सांप्रदायिक हिंसा, जातीय हिंसा या लंबे समय से चल रही किसी अन्य प्रकार की हिंसा से ग्रस्त हो।
2. राज्यों के संबंध में केंद्र की भूमिका, दायित्व एवं कार्यक्षेत्र कैसा होना चाहिये, विशेष रूप से नियोजन एवं बड़ी परियोजनाओं, जैसे—नदियों को जोड़ना आदि। ये ऐसे कार्य हैं, जिनमें 15-20 वर्षों का समय लगता है।
3. राज्यों के संबंध में केंद्र की भूमिका, दायित्व एवं कार्यक्षेत्र कैसा होना चाहिये, विशेष रूप से पंचायती राज संस्थाओं एवं अन्य स्थानीय निकायों को स्वायत्तता के संदर्भ में। संविधान की छठी अनुसूची में वर्णित स्वायत्त निकायों का प्रशासन भी इसमें शामिल है।
4. राज्यों के संबंध में केंद्र की भूमिका, दायित्व एवं कार्यक्षेत्र कैसा होना चाहिये, विशेष रूप से स्वतंत्र नियोजन एवं जिला स्तर पर पृथक् बजट बनाने के संदर्भ में।
5. राज्यों के संबंध में केंद्र की भूमिका, दायित्व एवं कार्यक्षेत्र कैसा होना चाहिये, विशेष रूप से केंद्र द्वारा राज्यों को विभिन्न मदों के अंतर्गत प्राप्त होने वाली सहायता के संदर्भ में।
6. राज्यों के संबंध में केंद्र की भूमिका, दायित्व एवं कार्यक्षेत्र कैसा होना चाहिये, विशेष रूप से पिछड़े राज्यों की उन्नति के लिये योजनाओं के निर्माण एवं उनके क्रियान्वयन के संदर्भ में।
7. आठवें से बारहवें वित्त आयोग द्वारा केंद्र-राज्य वित्तीय संबंधों के बारे में की गयी सिफारिशों के संदर्भ में, विशेष रूप से केंद्र से प्राप्त होने वाली बड़ी वित्तीय सहायता के बारे में।
8. उत्पादन पर पृथक् करों की आवश्यकता एवं प्रासंगिकता एवं वैट के कारण वस्तुओं एवं सेवाओं की बिक्री पर लगने वाले कर के संदर्भ में।

9. एक एकीकृत एवं लक्षित घरेलू बाजार बनाने के लिये अंतर-राज्यीय व्यापार के गठन एवं सरकारिया आयोग की रिपोर्ट के अध्याय 18 में इस संबंध की गयी सिफारिशों के संदर्भ में।
10. एक केंद्रीय विधि प्रवर्तन अधिकरण की स्थापना, जिसे अंतर-राज्यीय अपराधों की जांच का अधिकार हो तथा राज्यों की सीमाओं में होने वाले उन अपराधों की जांच का अधिकार हो, जिनसे राष्ट्रीय सुरक्षा खतरे में पड़ती हो, के गठन के संदर्भ में।
11. अनुच्छेद 355 के अंतर्गत आवश्यकता पड़ने पर स्व प्रेरणा से राज्यों में नियोजित किये जाने वाले अर्द्ध-सैनिक बलों की उपयोगिता के संदर्भ में।

आयोग ने अप्रैल 2010 में अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंप दी। कुल 1456 पृष्ठों के रिपोर्ट को सात खंडों में अंतिम रूप देने में आयोग को सरकारिया आयोग की रिपोर्ट, संविधान संचालन की समीक्षा के लिए गठित आयोग (NCRWC) की रिपोर्ट तथा द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग की रिपोर्ट से बहुत मदद मिली। हालांकि अनेक क्षेत्रों में आयोग की रिपोर्ट सरकारिया आयोग की अनुशंसाओं से मेल नहीं खाती थी।

आयोग अपने विचारार्थ विषय के अन्तर्गत उठाए गए मुद्दों की गहराई से जाँच करने तथा संबंधित सभी पक्षों की सांगोपांग समीक्षा के उपरांत इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि “सहकारी संघवाद” (Cooperative Federalism) भारत की एकता, अखंडता तथा भविष्य में इसके सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए अपरिहार्य है। इस प्रकार “सहकारी संघवाद” का सिद्धान्त भारतीय राजनीति एवं शासन व्यवस्था के लिए एक व्यावहारिक मार्गदर्शक का कार्य करता है।

कुल मिलाकर आयोग ने 310 अनुशंसाएँ कीं जिनमें से कुछ केन्द्र-राज्य संबंधों का भी स्पर्श करती हैं। कुछ प्रमुख अनुशंसाएँ निम्नलिखित हैं:

1. सूची III में वर्णित विषयों पर बने कानूनों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए यह आवश्यक है कि समवर्ती सूची के अन्तर्गत आनेवाले विषयों पर संसद में विधायन प्रस्तुत करने से पहले केन्द्र और राज्यों के बीच व्यापक सहमति बने।
2. राज्यों को सुपुर्द किए गए मामलों पर केन्द्र को संसदीय सर्वोच्चता स्थापित करने में अधिकतम संयम बरतना चाहिए। राज्य सूची तथा समवर्ती सूची को “हस्तांतरित

विषयों” के मामलों में राज्यों के प्रति लचीला रुख रखना बेहतर केन्द्र-राज्य संबंधों की पूँजी है।

3. केन्द्र को समवर्ती सूची के विषयों अथवा परस्पर व्यापी क्षेत्राधिकारों के संबंध में सिर्फ उन्हीं विषयों को हाथ में लेना चाहिए जो कि राष्ट्र हित में नीतियों की समरूपता के लिए नितांत आवश्यक हैं।
4. समवर्ती अथवा परस्पर व्यापी क्षेत्राधिकार से संबंधित मामलों के प्रबंधन के लिए अन्तर-राज्य परिषद को सतत अंकेक्षण की भूमिका में रहना चाहिए।
5. राष्ट्रपति द्वारा विधेयक लौटा दिए जाने की स्थिति में राज्य विधायिका के कार्य करने के लिए अनुच्छेद 201 में निर्धारित 6 माह की अवधि को राष्ट्रपति के लिए भी राज्य विधेयक पर सहमति देने अथवा रोकने के सम्बंध में निश्चय करने के लिए भी प्रयोज्य बनाया जा सकता है।
6. संसद को सूची 1 की प्रविष्टि 14 से संबंधित विषय (समझौता करना तथा इसे संसदीय अधिनियम द्वारा लागू कराना) पर कानून बनाना चाहिए जिससे कि संलग्न पद्धतियों को प्रणालीबद्ध किया जा सके। इस बारे में शान्ति का उपयोग स्वाभाविक रूप से विधायी एवं कार्यकारी शक्तियों की संघीय संरचना को देखते हुए निर्बाधा नहीं हो सकती।
7. संधियों एवं समझौतों के फलस्वरूप वित्तीय जिम्मेदारियों तथा राज्य की वित्तीय स्थिति पर इनके प्रभावों का ध्यान समय-समय पर गठित किए जाने वाले वित्तीय आयोगों को रखना चाहिए।
8. राज्यपालों का चयन करते समय केन्द्र सरकार को सरकारिया आयोग द्वारा अनुशंसित निम्नलिखित दिशा-निर्देशों का सख्ती से पालन करना चाहिए:
 - (i) उसे जीवन के किसी क्षेत्र में अग्रगण्य होना चाहिए।
 - (ii) उसे राज्य के बाहर का व्यक्ति होना चाहिए।
 - (iii) उसे एक असम्बद्ध व्यक्ति होना चाहिए जो कि राज्य की स्थानीय राजनीति से नजदीकी तौर पर न जुड़ा हो।
 - (iv) उसे ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जिसकी राजनीति में सामान्यतः बड़ी भूमिका न रही हो, विशेषकर हाल के अतीत में।
9. राज्यपालों के लिए पाँच साल का कार्यकाल निर्धारित होना चाहिए और उनकी पदच्युति केन्द्र सरकार की इच्छा भर से नहीं होनी चाहिए।

10. राष्ट्रपति को महाभियोग द्वारा हटाने की जो भी प्रक्रिया है, आवश्यक परिवर्तन सहित वही प्रक्रिया राज्यपाल को महाभियोग द्वारा हटाने में प्रयुक्त होनी चाहिए।
11. अनुच्छेद 163 राज्यपाल को ऐसा विवेकाधिकार प्रदान नहीं करता कि वह मंत्री परिषद के विरुद्ध अथवा उसकी सलाह के बिना कार्य करे। वास्तव में विवेकाधिकार के उपयोग का दायरा सीमित है और इस सीमित दायरे में भी राज्यपाल का कार्य एकपक्षीय अथवा अवास्तविक नहीं दिखना चाहिए। उसका कार्य विवेक द्वारा निर्देशित नेकनियती (ईमानदारी) द्वारा प्रेरित तथा सतर्कता द्वारा संतुलित होना चाहिए।
12. किसी राज्य की विधानसभा द्वारा पारित विधेयक के संबंध में राज्यपाल को इस बारे में छह माह के अंदर निर्णय लेना चाहिए कि वह इस पर सहमति दे अथवा राष्ट्रपति के विचारार्थ इसे सुरक्षित रखे।
13. जहाँ त्रिशंकु विधानसभा बनने की स्थिति में मुख्यमंत्री की नियुक्ति में राज्यपाल की भूमिका का प्रश्न है, यह आवश्यक है कि इस बारे में संवैधानिक परंपराओं का पालन करते हुए स्पष्ट दिशा-निर्देश बनाए जाएँ। ये दिशा-निर्देश निम्नलिखित हो सकते हैं:
 - (i) विधानसभा में जिस दल या दलों के समूह को सबसे अधिक समर्थन प्राप्त है, उसे सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करना चाहिए।
 - (ii) चुनावपूर्व गठबंधन की स्थिति में इस गठबंधन को एक दल मानना चाहिए और यदि इसे बहुमत प्राप्त होता है तो गठबंधन के नेता को राज्यपाल द्वारा सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करना चाहिए।
 - (iii) यदि किसी दल अथवा चुनावपूर्व गठबंधन वाले समूह को स्पष्ट बहुमत नहीं प्राप्त होता है तो राज्यपाल को मुख्यमंत्री का चयन निम्नलिखित प्राथमिकता चरण में करना चाहिए:
 - (क) चुनाव-पूर्व गठबंधन वाले दलों का समूह जिसके पास सबसे बड़ी संख्या है।
 - (ख) वह सबसे बड़ा एकल दल जो दूसरों के समर्थन से सरकार बनाने का दावा कर रहा हो।
 - (ग) चुनाव पश्चात् का गठबंधन जिसमें सभी हिस्सेदार सरकार में शामिल होना चाहते हैं।
 - (घ) चुनाव पश्चात् का गठबंधन जिसमें कुछ दल सरकार में शामिल होना चाहते हैं तथा शेष सरकार से बाहर रहकर उसका समर्थन करना चाहते हैं।
14. जहाँ तक किसी मुख्यमंत्री को हटाने का प्रश्न है, राज्यपाल को मुख्यमंत्री को अपना बहुमत सदन के पटल पर साबित करने के लिए बराबर कहते रहना चाहिए और इसके लिए एक समय सीमा निर्धारित करनी चाहिए।
15. राज्यपाल को मंत्री परिषद की सलाह के खिलाफ जाकर किसी राज्यमंत्री पर अभियोग दर्ज करने की सहमति देने का अधिकार होना चाहिए, यदि मंत्रिमंडल का निर्णय राज्यपाल की दृष्टि में उपलब्ध सामग्री को देखते हुए पूर्वाग्रह से प्रेरित प्रतीत होता है।
16. राज्यपालों को विश्वविद्यालयों के कुलपति के रूप में कार्य करने अथवा अन्य वैधानिक पद-धारण करने की परंपरा का अंत होना चाहिए। उसकी भूमिका केवल संवैधानिक प्रावधानों तक सीमित होनी चाहिए।
17. जब किसी बाहरी आक्रमण अथवा आंतरिक अव्यवस्था के कारण राज्य प्रशासन पंगु हो जाता है और इससे राज्य का संवैधानिक तंत्र ठप्प पड़ जाता है, तब अनुच्छेद 355 के अंतर्गत संघ को अपने सर्वोपरि उत्तरदायित्वों के निर्वहन के तहत सभी उपलब्ध विकल्पों पर विचार करते हुए स्थिति को नियंत्रित करना चाहिए। साथ ही अनुच्छेद 356 के अंतर्गत प्रदत्त शक्तियों का उपयोग “राज्य की संवैधानिक तंत्र की विफलता” को दुरुस्त करने तक ही सीमित रहना चाहिए।
18. जहाँ तक संवैधानिक तंत्र की विफलता के मामले में अनुच्छेद 356 के अंतर्गत कार्यवाही करने का प्रश्न है, एस.आर. बोम्बई बनाम भारतीय संघ (1994) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के आलोक में दिए गए नए दिशा-निर्देश को शामिल करते हुए उपयुक्त संशोधन किए जाने की जरूरत है। इससे राज्यों के मामले में संभावित संदेह एवं आशंका का निराकरण हो सकेगा जिससे कि केन्द्र-राज्य संबंध को बेहतर बनाने में मदद मिलेगी।

19. अब जबकि अनुच्छेद 352 तथा 356 के अंतर्गत आपातकाल लगाने के लिए शर्तें बहुत सख्त कर दी गई हैं और इसे अंतिम उपाय के रूप में ही उपयोग किए जाने का प्रावधान है और अनुच्छेद 355 के अन्तर्गत राज्यों की सुरक्षा का दायित्व संघ का है, यह आवश्यक है कि केन्द्र के हस्तक्षेप के संबंध में संवैधानिक एवं वैधानिक रूप-रेखा बनाई जाए, लेकिन इसमें अनुच्छेद 352 एवं 356 के अंतर्गत आत्यंतिक कदम उठाने की अनिवार्यता न हो। इस रूपरेखा (फ्रेम वर्क) को “स्थानिक आपातकाल” के रूप में उपयोग करने से यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि राज्य सरकार काम करती रहे तथा विधानसभा को भंग करने की जरूरत नहीं पड़े, जबकि केन्द्र सरकार इस संबंध में विनिर्दिष्ट तथा स्थानीय तौर पर प्रतिक्रिया करे। अनुच्छेद 355 (सपठित सातवीं अनुसूची के अन्तर्गत सूची 1 की प्रविष्टि 2A तथा सूची 2 की प्रविष्टि 1) के अन्तर्गत स्थानीय आपातकाल लागू करने का पूरा औचित्य बनता है।
20. अंतर-राज्य परिषद को अंतर-राज्यीय एवं केन्द्र-राज्य मतभेदों को दूर करने का एक विश्वसनीय शक्तिशाली तथा निष्पक्ष प्रणाली बनाने के लिए अनुच्छेद 263 में समुचित संशोधनों की आवश्यकता है।
21. क्षेत्रीय परिषदों की बैठक वर्ष में कम से कम दो बार होनी चाहिए तथा बैठकों का एजेण्डा सम्बन्धित राज्यों द्वारा आपसी समन्वय बढ़ाने तथा नीतियों की सुसंगतता के लिए प्रस्तावित किया जाना चाहिए। एक मजबूत अंतर-राज्य परिषद का सचिवालय क्षेत्रीय परिषदों में कार्यालय के रूप में भी कार्य कर सकता है।
22. वित्तीय मामलों में अन्तर राज्य समन्वय को बढ़ावा देने के लिए राज्यों के वित्त मंत्रियों की शक्ति प्राप्त समिति का गठन एक सफल प्रयोग हो सकता है। दूसरे क्षेत्रों में भी इसी प्रकार के संदर्शों (मॉडल्स) के सांस्थानिकीकरण की आवश्यकता है। मुख्यमंत्रियों का एक फोरम, जिसकी अध्यक्षता चक्रानुक्रम से एक मुख्यमंत्री करें, के बारे में भी विचार किया जा सकता है जिससे कि ऊर्जा, खाद्य, शिक्षा, पर्यावरण तथा स्वास्थ्य क्षेत्रों में समन्वित नीतियाँ लागू की जा सकें।
23. स्वास्थ्य, शिक्षा, इंजीनियरी तथा न्यायपालिका आदि क्षेत्रों में नई अखिल भारतीय सेवाओं को सृजित करना चाहिए।
24. राज्यों के प्रातिनिधिक फोरम के रूप में सेकेण्ड चैम्बर के गठन एवं कार्य में बाधक कारकों को हटाना चाहिए अथवा संशोधित करना चाहिए। और इसके लिए संवैधानिक प्रावधानों के संशोधन की जरूरत हो तो वह भी करना चाहिए। वास्तव में राज्य सभा में केन्द्र और राज्यों के बीच वित्तीय विधायी तथा प्रशासी संबंधों को लेकर मतभेद के बिन्दुओं का स्वीकार्य हल निकालने की असीमित क्षमता है।
25. राज्यों के बीच सत्ता संतुलन वांछनीय है और यह राज्य सभा में प्रतिनिधित्व की समानता के आधार पर संभव हो सकता है। इसके लिए प्रासंगिक प्रावधानों में संशोधन कर राज्य सभा में राज्यों को सीटों की समानता बिना उनकी जनसंख्या का ध्यान रखे किया जा सकता है।
26. स्थानीय निकायों को स्व-शासन की संस्थाओं के रूप में कार्य करने देने के लिए शाक्तियों के प्रतिनिधित्व का विषय-क्षेत्र उपयुक्त संशोधनों के माध्यम से संवैधानिक रूप से परिभाषित होना चाहिए।
27. भविष्य के सभी केन्द्रीय विधायन, जो राज्यों की संलग्नता की माँग करते हैं, में लागत में साझीदारी की व्यवस्था होनी चाहिए जैसा कि शिक्षा का अधिकार अधिनियम (आर.टी.ई.) में प्रावधानित है। पहले से वर्तमान केन्द्रीय विधायन जिनमें कि राज्यों को कार्यान्वयन की जिम्मेदारी दी गई है, को उपयुक्त रूप से संशोधित करना चाहिए जिससे कि केन्द्र सरकार लागत में हिस्सेदारी सुनिश्चित कर सके।
28. प्रमुख खनिजों की रॉयल्टी दरों का पुनरीक्षण प्रत्येक तीन वर्षों पर बिना विलम्ब किया जाना चाहिए और तीन वर्षों की अवधि पार होने पर राज्यों को समुचित क्षतिपूर्ति दी जानी चाहिए।
29. व्यवसाय कर की वर्तमान हदबंदी को संविधान संशोधन द्वारा समाप्त कर देना चाहिए।
30. अनुच्छेद 268 में उल्लिखित करों से और अधिक राजस्व प्राप्त करने की संभावना के लिए उक्त प्रावधान पर नए सिरे से विचार करना चाहिए। इस

- मुद्दे को या तो अगले वित्त आयोग को संदर्भित कर देना चाहिए अथवा इस मामले को देखने के लिए एक विशेषज्ञ समिति का गठन करना चाहिए।
31. अधिक उत्तरदायित्व लाने के लिए सभी वित्तीय विधायनों का एक स्वतंत्र निकाय द्वारा वार्षिक आकलन करना चाहिए तथा इन निकायों की रिपोर्टों को संसद के दोनों सदनों/राज्य विधायिकाओं के समक्ष रखना चाहिए।
 32. वित्त आयोग के विचारार्थ विषयों को केन्द्र तथा राज्यों के बीच निष्पक्ष रूप से संदर्भित करना चाहिए। वित्त आयोगों के विचारार्थ विषयों (TOR) को अंतिम रूप देने में राज्यों की संलग्नता के लिए एक प्रभावी प्रक्रिया अपनाई जानी चाहिए।
 33. केन्द्र सरकार के सभी वर्तमान उपकरणों तथा सरचाजों की समीक्षा करनी चाहिए ताकि सकल कर राजस्व में उनकी हिस्सेदारी को कम किया जा सके।
 34. योजना एवं गैर-योजना खर्च में नजदीकी संलग्नता के कारण एक विशेषज्ञ समिति की नियुक्ति की जा सकती है जो कि योजना खर्च एवं गैर-योजना खर्च के बीच अंतर के मुद्दे को देखे।
 35. वित्त आयोग तथा योजना आयोग के बीच बेहतर समन्वय होना चाहिए। वित्त आयोग तथा पंचवर्षीय योजना के द्वारा आवरित अवधियों के तालमेल से ऐसे समन्वय की स्थिति में सुधार किया जा सकता है।
 36. वित्त मंत्रालय के वित्त आयोग प्रभाग को एक पूर्ण विभाग के रूप में रूपांतरित कर देना चाहिए जो कि वित्त आयोगों के स्थायी सचिवालय के रूप में कार्य करे।
 37. योजना आयोग की वर्तमान परिस्थितियों में महत्वपूर्ण भूमिका है लेकिन इसकी भूमिका समन्वय की अधिक होनी चाहिए, केन्द्रीय मंत्रालयों एवं राज्यों की प्रक्षेत्रीय योजनाओं के सूक्ष्म प्रबंधन की कम।
 38. अनुच्छेद 307 (सपठित सूची 1 की प्रविष्टि 42) के अंतर्गत अन्तर-राज्य व्यापार एवं वाणिज्य आयोग की स्थापना के लिए कदम उठाए जाने चाहिए। इस आयोग में परामर्शदात्री एवं कार्यकारी भूमिकाएँ निर्णयकारी शक्ति के साथ अंतर्निहित होनी चाहिए। एक संवैधानिक निकाय के रूप में आयोग के निर्णय अंतिम तथा सभी राज्यों के साथ-साथ भारतीय संघ पर भी बाध्यकारी होना चाहिए। आयोग के निर्णयों से प्रभावित कोई पक्ष सर्वोच्च न्यायालय में अपील दायर कर सकता है।
- आयोग की रिपोर्ट सभी हितधारकों - राज्य सरकारों/संघ शासित प्रदेशों के प्रशासनों तथा केन्द्रीय मंत्रिमंडल/सम्बन्धित विभागों आदि को उनके सुविचारित दृष्टिकोण के लिए भेजी गई थी। केन्द्रीय मंत्रालयों/विभागों तथा राज्य सरकारों/संघ शासित क्षेत्रों के प्रशासनों से प्राप्त टिप्पणियों का अंतर-राज्य परिषद (Inter-state council) द्वारा अध्ययन किया जा रहा है।²⁸

तालिका 14.1 केन्द्र-राज्य विधायी सम्बन्धों से जुड़े अनुच्छेद: एक नजर में

अनुच्छेद	विषय-वस्तु
245	संसद द्वारा एवं राज्य विधायिकाओं द्वारा बनाए गए कानूनों का विस्तार।
246	संसद द्वारा एवं राज्य विधायिकाओं द्वारा बनाए गए कानूनों की विषय-वस्तु।
247	कतिपय अतिरिक्त न्यायालयों की स्थापना का संसद का अधिकार।
248	विधायन की अवशेष शक्तियाँ।
249	राष्ट्रहित में राज्य सूची से संबंधित किसी मामले में संसद की कानून बनाने की शक्ति।
250	राज्य सूची के किसी विषय पर आपातकाल की स्थिति में संसद की कानून बनाने की शक्ति।
251	अनुच्छेद 249 एवं 250 के अंतर्गत संसद द्वारा बनाए गए कानूनों एवं राज्य विधायिकाओं द्वारा बनाए गए कानूनों के बीच असंगतता।
252	दो या अधिक राज्यों के लिए, उनकी सहमति के पश्चात् संसद द्वारा कानून बनाने की शक्ति तथा किसी अन्य राज्य द्वारा इस विधायन को अंगीकार करना।
253	अंतर्राष्ट्रीय समझौतों पर अमल करने के लिए विधायन।

अनुच्छेद	विषय-वस्तु
254	संसद द्वारा बनाए कानूनों तथा राज्य विधायिकाओं द्वारा बनाए गए कानूनों के बीच असंगति।
255	अनुशंसाओं तथा पूर्व अनुमोदनों को प्रक्रियागत मामलों के रूप में देखने की जरूरत।

तालिका 14.2 केन्द्र-राज्य प्रशासनिक सम्बन्धों से संबंधित अनुच्छेद

अनुच्छेद	विषय-वस्तु
256	राज्यों तथा संघ की जिम्मेदारियाँ।
257	कतिपय मामलों में संघ का राज्यों के ऊपर नियंत्रण।
257-ए	राज्यों के सहायतार्थ संघ के सशस्त्र बलों अथवा अन्य बलों की तैनाती (निरस्त)।
258	कतिपय मामलों में राज्यों को शक्ति प्रदान करने की संघ की शक्ति।
258-ए	राज्यों की संघ को कार्य सौंपने की शक्ति।
259	प्रथम अनुसूची के भाग-बी में राज्यों में सशस्त्र बल (निरस्त)।
260	भारत के बाहर के भूभागों के संबंध में संघ का अधिकार क्षेत्र।
261	सार्वजनिक क्रियाकलाप, अभिलेख तथा न्यायिक प्रक्रियाएँ।
262	अंतर्राज्यीय नदियों अथवा नदी-घाटियों के पानी से संबंधित विवादों के संबंध में न्याय निर्णय।
263	अंतर्राज्य संबंधों से संबंधित प्रावधान।

तालिका 14.3 केन्द्र-राज्य वित्तीय सम्बन्धों से संबंधित अनुच्छेद: एक नजर में

अनुच्छेद	विषय-वस्तु
केन्द्र-एवं राज्यों के बीच राजस्व का वितरण	
268	संघ द्वारा आरोपित किन्तु राज्यों द्वारा संगृहित एवं उपयोग किए गए कर।
268-ए	संघ द्वारा आरोपित तथा राज्यों द्वारा संगृहित एवं उपयोग किया गया सेवा कर।
269	केन्द्र द्वारा लगाए गए एवं संगृहित किए गए किन्तु राज्यों को दिए जाने वाले कर।
270	केन्द्र एवं राज्यों के बीच लगाए गए कर एवं संघ तथा राज्यों के बीच वितरण।
271	संघ के लिए कतिपय करों पर अतिरिक्त कर (सरचार्ज)।
272	संघ द्वारा लगाए गए एवं संगृहित किए गए कर, जो कि संघ और राज्यों के बीच वितरित भी किए जा सकते हैं (निरस्त)।
273	जूट एवं जूट उत्पादों पर निर्यात कर के लिए अनुदान।
277	कराधान को प्रभावित करने वाले विधेयक को, जिनमें कि राज्यों की भी रुचि है, पर राष्ट्रपति की अनुशंसा लेना।
275	कतिपय राज्यों को संघ द्वारा अनुदान।
276	व्यवसाय, व्यापार, कॉलिंग तथा रोजगारों पर कर।
277	बचत।
278	कतिपय वित्तीय मामलों से संबंधित प्रथम अनुसूची के भाग-बी के संबंध में राज्यों के साथ समझौता (निरस्त)।

अनुच्छेद	विषय-वस्तु
279	“कुल प्राप्तियों” की गणना इत्यादि।
280	वित्त आयोग।
281	वित्त आयोग की अनुशंसाएँ।
अन्यान्य वित्तीय प्रावधान	
282	संघ अथवा किसी राज्य द्वारा अपने राजस्व में से अदा करने योग्य खर्च।
283	संचित निधियों, आकस्मिकता निधियों तथा लोक लेखा में जमा धनराशि का संरक्षण।
284	“सूटर्स डिपॉजिट” तथा अन्य धन राशि जो कि लोक सेवकों एवं न्यायालयों द्वारा प्राप्त होती है, का संरक्षण।
285	राज्य कराधान में संघ की सम्पत्तियों की छूट।
286	वस्तुओं की बिक्री अथवा खरीद पर करारोपण पर प्रतिबंध।
287	बिजली पर करों से छूट।
288	कतिपय मामलों में पानी तथा बिजली से संबंधित राज्यों द्वारा करारोपण से छूट।
289	किसी राज्य की संपत्ति एवं आय का संघीय करारोपण से छूट।
290	कतिपय खर्चों एवं पेंशन से संबंधित समायोजना।
291	शासकों के “प्रिवीपर्स” (निरस्त)
उधार ग्रहण	
292	भारत सरकार द्वारा लिए गए उधार।
293	राज्यों द्वारा लिया गया उधार

संदर्भ सूची

1. अब भी अंतिम प्रविष्टि की संख्या 97 है, लेकिन कुल संख्या 100 है। प्रविष्टि संख्या 2क, 92क और 92ख को जोड़ा गया और प्रविष्टि 33 को हटाया गया। देखें परिशिष्ट-II
2. अब भी अंतिम प्रविष्टि संख्या 66 है। लेकिन कुल प्रविष्टि 61 हैं। प्रविष्टि संख्या 11, 19, 20, 29 और 36 को हटाया गया, देखें परिशिष्ट-II
3. अब भी अंतिम प्रविष्टि संख्या 47 है, लेकिन इसमें कुल संख्या 52 हैं। प्रविष्टि 11क, 17क, 17ख, 20क और 33क को जोड़ा गया, देखें परिशिष्ट-II
4. केन्द्र-राज्य संबंधों पर आयोग की रिपोर्ट भाग-I (भारत सरकार 1988) पृष्ठ 28-29
5. उदाहरण के लिए समवर्ती सूची के विषय से आवश्यक वस्तु अधिनियम को संसद द्वारा इस संबंध में बनाया गया, जिसमें कार्यकारी शक्ति को केन्द्र में निहित रखा गया।
6. इस उपबंध (राज्य की केन्द्र को शक्तियां सौंपने की शक्ति) को 7वें संविधान संशोधन अधिनियम 1956 द्वारा जोड़ा गया। इससे पहले सिर्फ केन्द्र के पास यह शक्ति थी।
7. इस संबंध में विस्तार के लिए अध्याय 15 देखें।
8. कांस्टीट्यूट असेम्बली डिबेट्स, खंड VII पृष्ठ 41-42

9. विस्तार के लिए अध्याय 52 देखें।
10. विस्तार के लिए अध्याय-74 देखें
11. विस्तार के लिए अध्याय-15 देखें।
12. प्रविष्टि संख्या 82, 83, 84, 85, 86, 87, 88, 89, 90, 91, 92, 92क, 92ख, 92ग और 96, देखें परिशिष्ट-II
13. प्रविष्टि संख्या 45, 46, 47, 48, 49, 50, 51, 52, 53, 54, 55, 56, 57, 58, 59, 60, 61, 62, 63 और 66, देखें परिशिष्ट-II
14. प्रविष्टि 35, 44 और 47, देखें परिशिष्ट-II
15. मूलतः यह सीमा 250 रुपये प्रतिवर्ष थी। 60वें संशोधन अधिनियम, 1988 द्वारा इसे बढ़ाकर 2500 रुपये प्रतिवर्ष कर दिया गया।
16. अतिरिक्त उत्पाद शुल्क (विशेष महत्व का माल) अधिनियम, 1957 को संसद द्वारा प्रभावी बनाया गया और तंबाकू, चीनी, रेशम, कपास, एवं ऊनी वस्त्रों को अंतर्राज्यीय व्यापार एवं वाणिज्य में विशेष महत्व दिया गया।
17. यह संशोधन अनुच्छेद 272 को समाप्त करता है (ऐसे कर जिन्हें केन्द्र उद्गृहीत और एकत्रित करता हो तथा जिन्हें केन्द्र व राज्य के बीच बांटा जा सकता हो)।
18. समूह रूप से दर्शित। इस तरह 11 किए गए (20 में से) देखें परिशिष्ट-II
19. देखें 'संघ की संपत्ति' अध्याय 74
20. देखें 'राज्य की संपत्ति' अध्याय 74
21. एम.पी. जैन: *इंडियन कांस्टीट्यूशनल लॉ*, वाधवा चतुर्थ संस्करण पृष्ठ 342-43
22. वार्षिक प्रतिवेदन 2015-16, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ-58
23. यह कार्य 73वें एवं 74वें संशोधन अधिनियम 1992 द्वारा जोड़ा गया, जिससे क्रमशः पंचायत एवं नगरपालिकाओं को संवैधानिक दर्जा दिया गया।
24. सागर सीमा शुल्क अधिनियम (1963)
25. समिति के अन्य दो सदस्य थे-डा. लक्ष्मणस्वामी मुदालियर और पी.सी. चन्द्रा रेड्डी।
26. वी. शिवरामन और एम.आर. सेन आयोग के दो अन्य सदस्य थे।
27. वार्षिक प्रतिवेदन 2011-12 गृह मंत्रालय भारत सरकार, पृष्ठ 79
28. आयोग के अन्य चार सदस्य थे- धीरेन्द्र सिंह (भारत सरकार के पूर्व सचिव), विनोद कुमार गुग्गल (भारत सरकार में पूर्व सचिव), प्रो० एन.आर. माधव मेनन (पूर्व निदेशक, राष्ट्रीय न्यायिक अकादमी, भोपाल तथा नेशनल लॉ स्कूल ऑफ इंडिया, बंगलोर) तथा डॉ० अमरेश बागची (एमेरिटस प्रोफेसर नेशनल इंस्टीच्यूट ऑफ पब्लिक फाइनेन्स एंड पॉलिसी, नई दिल्ली)। फरवरी, 2008 में डॉ० बागची के निधन के पश्चात विजय शंकर (पूर्व निदेशक सी.बी.आई. भारत सरकार) को आयोग के एक सदस्य के रूप में अक्टूबर, 2008 में नियुक्त किया गया।